www.kahaar.in

ISSN (p): 2394-3912
ISSN (e): 2395-9369
त्रैमासिक 11 (1) जनवरी – मार्च, 2024
प्रिंट कापी : रूपये 200/–
ऑनलाइन : रूपये 1000/–
Technical Articles are Peer Reviewed

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

KAHAAR

A multilingual magazine for common people

प्रकाशक
प्रोफेसर एच्.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी, लखनऊ
(www.phssfoundation.org)
सह-प्रकाशक
पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति, लखनऊ (www.prithvipur.org)
बचपन क्रिएशन्स, लखनऊ(www.bachpancreations.com)
सोसायटी फॉर इन्वायरमेन्ट एण्ड पब्लिक हेल्थ (सेफ), लखनऊ

ग्रामीण विकास की समावेशी पहल

प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउंडेशन के धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र, लखनऊ के तहत बाराबंकी जिले के देवा विकास खंड के अकटहिया गाँव में किसान गोष्ठी व मच्छरदानी वितरण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। केंद्र के निदेशक प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह द्वारा जैविक खेती के लाभ, कृषि में रोजगार के अवसर जैसे विषयों पर चर्चा की गई, जिसमे प्रोफ़ेसर सिंह जी द्वारा जैविक खेती को अपनाने पर विशेष बल दिया गयाद्य श्री मेराजुद्दीन सिद्दीकी जी द्वारा गाँव की समस्याओं को दूर करने के उपाय, सामुदायिक सहभागिता और आपसी मेलजोल से ग्रामीण विकास के विषयों पर चर्चा की गई। किसानों व महिलाओं ने अपनी समस्याएँ बताईंद्यग्रामवासियों को मच्छरदानी व मौसमानुकूल संकर सब्जी के बीज वितरित किए गए। इसके साथ ही कृष्णानन्द सिंह व आकाश मौर्य ने मचान पोषण वाटिका से होने वाले लाभ, गुणवत्तापूर्ण सब्जी के उत्पादन की विधियों और तकनीकों पर चर्चा की।

संस्था का उद्देश्य ग्रामीण समाज के युवाओं और महिलाओं के विकास के लिए कार्य करना है जिससे समाज के विभिन्न स्तरों के व्यक्तियों का विकास हो सके।

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

त्रैमासिक 11 (1) जनवरी - मार्च, 2024

प्रधान संपादक
प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह, लखनऊ

सम्पादक
प्रो. गोविन्द जी पाण्डेय
डॉ. संजय द्विवेदी

कार्यकारी सम्पादक
श्री कृष्णानन्द सिंह, लखनऊ

सह–सम्पादक
डॉ. नागेन्द्र कुमार सिंह, वाराणसी
डॉ. सीमा मिश्रा, गोरखपुर
डॉ. पीयूष गोयल, नई दिल्ली
डॉ. रूद्र प्रताप सिंह, आजमगढ़
डॉ. धीरेन्द्र पाण्डेय, लखनऊ
श्री शुभम अभिषेक, धनवाद
श्री आकाश मौर्या, बाराबंकी

सम्पादक मण्डल
डॉ. राम सनेही द्विवेदी
डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय, बालापार, गोरखपुर
डॉ. रामचेत चौधरी, गोरखपुर
प्रोफेसर राकेश सिंह सेंगर, मेरठ
डॉ. सुमन कुमार सिन्हा, गोरखपुर
डॉ. विष्णु प्रताप सिंह, लखनऊ
डॉ. दिक्षा गौतम
प्रोफेसर रामचन्द्र, लखनऊ
डॉ. अनुज कुमार सक्सेना, सीतापुर
डॉ. अर्चना (सेंगर) सिंह, कनिटकट (यूएस.ए.)
डॉ. रमाकांत पाण्डेय, पटना

सलाहकार मण्डल
प्रोफेसर सरोज कान्त बारिक, लखनऊ
प्रोफेसर प्रफुल्ल वी. साने, जलगाँव
प्रोफेसर रामदेव शुक्ल, गोरखपुर
डॉ. एम.सी. नौटियाल, लखनऊ
प्रोफेसर शशि भूषण अग्रवाल, वाराणसी
डॉ. एस.सी. शर्मा, लखनऊ
प्रोफेसर सूर्यकान्त, लखनऊ
प्रो. अरूण पाण्डेय, भोपाल
डॉ. रूद्रदेव त्रिपाठी, लखनऊ
प्रोफेसर रणवीर दहिया, रोहतक
प्रोफेसर एन. रघुराम, दिल्ली
डॉ. सुधा वशिष्ठ, लखनऊ
श्री आकाश वर्मा, लखनऊ
इ. रविन्द्र कुमार श्रीवास्तव, लखनऊ
डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, नई दिल्ली
डॉ. सिराज वजीह, गोरखपुर
प्रो. उपेन्द्र नाथ द्विवेदी, लखनऊ
प्रोफेसर मालविका श्रीवास्तव, गोरखपुर
डॉ. निहारिका शंकर, नोएडा
डॉ. संजय सिंह, झांसी
श्री उपेन्द्र प्रताप राव, दुदही
इं. तरूण सेंगर, इरविन अमेरिका
डॉ. पूनम सेंगर, चण्डीगढ़
श्री अविनाश जैसवाल, दुदही

आवरण फोटो
श्री प्रकाशवीर सिंह, लखनऊ
प्रबन्ध-सम्पादक
श्री अंचल जैन, लखनऊ
सोशल मीडिया
श्री रंजीत शर्मा, लखनऊ
श्री योगेन्द्र प्रताप सिंह, लखनऊ

संपादकीय पता
04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025 भारत
ई–मेल : phssoffice@gmail.com/dr.ranapratap59@gmail.com
वेबसाइट : www.kahaar.in/www.kahaar.org (web portal)
https://www.facebook/kahaarmagazine.com

Technical Articles are Peer Reviwed

सहयोग राशि	प्रिंटकापी	ऑनलाइन
एक प्रति	: 200 रूपये	1000 रूपये
वार्षिक	: 700 रूपये	3000 रूपये

सहयोग राशि 'प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटीः लखनऊ' के नाम भेजें।
खाता संख्या– 2900101002506, कैनरा बैंक, बी.बी.ए. विश्वविद्यालय, लखनऊ
IFSC Code - CNRB-0002900

घोषणा

लेखकों के विचार से 'कहार' की टीम का सहमत होना जरूरी नहीं। किसी रचना में उल्लेखित तथ्यात्मक भूल के लिए 'कहार' की टीम जिम्मेदार नहीं होगी।

लेखकों के लिए

वैचारिक रचनाओं में आवश्यक संदर्भ भी दें एवं इन संदर्भों का विस्तार रचना के अन्त में प्रस्तुत करें। अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी तथा हिन्दी सहित अन्य भाषाओं की रचनाओं का अंग्रेजी या हिन्दी में सारांश दें। मौलिक रचनाओं के साथ रचना के स्वलिखित, मौलिक एवं अप्रकाशित होने का प्रमाणपत्र दें। लेखक पासपोर्ट साइज फोटो भी भेंजे। रचनाऐं English के Times New Roman (12 Point) और हिन्दी के लिए कृति देव 10 में Word Format (Window 2003) में टाइप करें। तस्वीरें, चित्र, रेखाचित्र आदि PDF Format में भेंजे।

विज्ञापन दाताओं के लिए

विज्ञापन की विषय वस्तु के साथ ही भुगतान 'प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटी, लखनऊ' के नाम मल्टीसिटी चेक या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सम्पादकीय पते पर भेजें। ऑनलाइन पेमेंट उपरोक्त* बैंक खाते में कर सकते है।

रूपये 6000/– पूरा पृष्ठ (सादा) रूपये 4000/– आधा पृष्ठ (सादा)
रूपये 10000/– पूरा पृष्ठ (रंगीन) रूपये 6000/– आधा पृष्ठ (रंगीन)

For Advertisers

Please send payment in form of DD or multicity cheques in favour of 'Professor H.S. Srivastava Foundation for Science and Society' Payable at Lucknow along with subscription forms or Advertisement draft. Online Payment can also be made in the account marked above as*.
Rs. 6000/- Full Page (B/W) Rs. 4000/- Half Page (B/W)
Rs. 10000/- Full Page (Color) Rs. 6000/- Half Page (Color

कहार एक पारम्परिक मनुष्य वाहक के लिए प्राचीन देशज सम्बोधन है। कहार की तरह ही यह पत्रिका जानकारियों एवं लोगों के बीच सेतु बनने की कोशिश कर रही है।

अनुक्रमणिका

क्र०सं०	विषय		पृष्ठ संख्या
01	सम्पादकीय	प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह	01
02	Editorial	Prof. Rana Pratap Singh	03
03	जल संरक्षण, नदी पुनरूद्धार और चम्बल की शांति पर जलपुरूष डॉ. राजेन्द्र सिंह से बात–चीत	प्रस्तुती–श्री कृष्णानन्द सिंह	05
04	नदी का नाद	प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह	08
05	सी...सी.....चटपटी करारी तीखी मिर्च और उसकी विविधता	मधु प्रकाश श्रीवास्तव	10
06	जैविक खेती का आधारः वेस्ट डीकम्पोजर	डॉ. रणधीर नायक, डॉ. रुद्र प्रताप सिंह एवं प्रो. डी.के. सिंह	13
06	पेड़वा लगइबऽ तऽ बरसी पानी (भोजपुर कविता)	श्री कृष्णानन्द राय	15
07	पपीते की बागवानी	डॉ. आर.एस. सेंगर एवं श्री कृशानु	16
08	एवोकैडोः उपयोग और लाभ	अमजद अन्सारी	21
09	'खड़तल'(भोजपुर कविता)	मंगतराम शास्त्री	23
10	उच्च अध्ययन में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका	डॉ. अजय शुक्ला और माधुरी तिवारी	24
11	Role of farm women in transforming agriculture in India	Mr. Y. P. Singh	28
12	Microbial Resilience to Climate Extremes: A Short Review	Mr. Abirami Subramanian and Mrs. Sushmitha Baskar*	34
13	Hybrid Seed Production Technology for Enhancing the Rice Production	Mr. Kushagra Yadav, Dr. Rakesh Singh Sengar, Ms. Huwishka Dutt and Ms. Shalini Gupta	39
14	Aquatic Pollution and Its Impact on Aquaculture	Mr. Ambrish Singh, C.P. Singh, Ashish Singh and Shashank Singh2	43
15	A comprehensive review of Artificial Intelligence applications in different fields	Mr. Ankita Yadav and Ms. Geeta Dhania	45

सम्पादकीय

2024, बदलती ठंड और बढ़ती गर्मी

दुनिया भर में अनेक सभ्यताओं के अपने-अपने नववर्ष होते हैं, तथा अपनी संस्कृति एवं परंपराओं के अनुसार लोग नए वर्ष के लिए नए-नए संकल्प लेते हैं, नई योजनाएँ बनाते हैं, और नई शुरुआत करते हैं । परन्तु वैश्विक स्तर पर सबसे अधिक धूम-धड़ाके के साथ अंग्रेजी नववर्ष मनाया जाता है। एक जनवरी से 2024 एक नये वर्ष के रूप में शुरू हो गया है। जो लोग इसे अपना नववर्ष मानते हैं, उन सबको नववर्ष-2024 की शुभकामनाएँ और पिछले वर्ष की सफलताओं तथा उपलब्धियों की बधाई। भारतीय परिप्रेक्ष्य में जो लोग लोहड़ी, मकर संक्रांति, पोंगल, बिहु, उत्तरायण, विल्लाकु आदि अपने-अपने सांस्कृतिक त्यौहारों से नए वर्ष की शुरुआत मानते हैं, उन सबको भी उनके नववर्ष की शुभकानाएँ और बधाई ।

भारत के अधिकांश हिस्सों में यह आंग्ल नववर्ष ठण्ड के चढ़ाव के दिनों में शुरू होता है, और थोड़े दिनों बाद तेरह से पंद्रह जनवरी के बीच लोहड़ी, मकर संक्रांति, बीहु, उत्तरायण, विल्लाकु, तथा पोंगल, माघ मेले, फिर वसन्त पंचमी और होली जैसे क्षेत्रीय और सांस्कृतिक धार्मिक त्यौहार आ जाते हैं। 9 अप्रैल को विक्रम संवत का नववर्ष मनाया जाता है। लोग अंग्रेज़ी नववर्ष के साथ-साथ इन्हें भी अपनी-अपनी परंपराओं और संस्कृतियों के अनुसार उल्लास से मनाते हैं । अधिकांश भारतीयों की मान्यता है, कि सूर्य के उत्तरायण होने से शुभ कार्यों की दुबारा शुरुआत की जा सकती है इस तरह देंखें तो 2024 की शुरुआत के महीनों में उल्लासित होने और खुशियाँ मनाने के अनेक अवसर स्वतः उपलब्ध हो जाते हैं। पर अधिकांश स्थानीय त्यौहार और उत्सव मौसम और फसलों के उत्पादों के अनुकूलन के उल्लास से विकसित हुए हैं, इसलिए प्रतिकूल मौसम हमारे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक घटनाओं और व्यवहारों को गंभीर रूप से प्रभावित करता है। इस वर्ष ठंढ देर से आई पर खूब आई। ठंढ की चुभन इस बार पिछले सालों से काफी अधिक महसूस की जा रही है। मौसम कब कैसा करवट ले ले, अब इसका अनुमान लगाना पहले से अधिक कठिन होता जा रहा है। मार्च की शुरुआत में ही बारिश, ओले और तेज हवाओं से कई क्षेत्रों मे पकी फसलों का भारी नुकसान हुआ है, और जान-माल की हानि हुई है। खेती से जुड़े लोग मौसम के अनपेक्षित बदलावों से अनायास सहम जाते हैं।

कई दशकों के पर्यावरण तथा जलवायु परिवर्तन एवं वैश्विक ऊष्मीकरण के अनुभव तथा उसकी चर्चा से लोग मौसम तथा पर्यावरण के बीच के संबंधों को अब पहले से बेहतर समझने लगें हैं। जाड़े में ठंढ कम पड़ने से गेहूं और सेव जैसी ठंढे मौसम की कई फसलों की उपज कम हो जाती है। ठंढ अधिक बढ़ने से और बर्फीली बूँदों और ठंढी हवाओं के आते रहने से भी जाड़े में अनेक फसलें खराब हो जाती हैं। भारत में अभी भी बहुत बड़ी संख्या ऐसे परिवार हैं, जो ठंढ से बचाव के लिए गरम कमरों और गरम कपड़ों के अभाव में आग के अलाव से अपने आप को ठंढ से बचाए रखने का प्रयास करते हैं। ठंढ बढ़ने से उनकी दिक्कतें और बढ़ जाती हैं।

पिछली लगभग दो सदियों में धीरे -धीरे विश्व भर में प्राचीन सभ्यताओं को पिछड़ मान कर नई सभ्यताएँ विकसित हुई, जो सैद्धांतिक रूप से ज्ञान-विज्ञान के नए स्वरूपों पर आधारित हैं, और व्यावहारिक रूप से उद्योग, कारखानों और नगरीय व्यवस्थाओं की पक्षधर रहीं। उद्योगों ने प्राकृतिक संसाधनों को बदल कर कृत्रिम पदार्थ बनाए और वैज्ञानिक तकनीकों तथा इंजीनियरिंग के ज्ञान से उन्हें लोगों की सुविधा बढ़ाने वाले उत्पादों में तब्दील किया। एक वैश्विक व्यापार के रूप में इसने कालांतर में एक विशालकाय शक्तिशाली वैश्विक बाजार-तंत्र का स्वरूप ले लिया। सारा अर्थशास्त्रीय और वैज्ञानिक विमर्श इसी बाजार-तंत्र के भीतर नई अँगड़ाइयाँ लेने लगा। विकास का मतलब धन का एकत्रीकरण, धन का बहाव और अधिक से अधिक सुविधाजनक मानव जीवन के लिए बहुतायत में उपभोग सामग्रियों के खरीद तथा उपयोग की क्षमताके बढ़ने को माना गया। मनुष्य के लिए जल, यातायात, भोज्य सामग्री, उपभोग सामग्री एवं स्वास्थ्य संरक्षण सामग्री आदि की बहुतायत में व्यवस्था बनी रहे, इसके लिए अनेक तरह के ज्ञान -विज्ञान निर्मित हुए, उद्योग स्थापित हुए, वैश्वीकृत विपणन व्यवस्था प्रबंधित हुई, अंतर्राष्ट्रीय समूह बने, नए सिद्धांत गढ़े गए तथा वैश्विक नियामक व्यवस्थाएँ बनी।

लोगों के उपभोग के लायक उपयोगी वस्तुओं की कीमत नियंत्रित रखने और अधिक से अधिक लोगों के लिए

04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025
ई–मेलः dr.ranapratap59@gmail.com

सुविधाजनक रोजगार पैदा करने के अर्थशास्त्रीय विमर्शों ने अधिक से अधिक वस्तुएँ पैदा करने, बेचनें तथा उनकी खपत बढ़ाने की वकालत की, जिसे अपने देशों और समाजों के आर्थिक विकास की कुँजी मानकर दुनिया भर की सरकारों ने हाथों-हाथ लपक लिया। पिछले दशक के उत्तरार्द्ध से हम सब भी इसी तेज आर्थिक विकास में मनुष्य की गरीबी, बदहाली और भुखमरी से मुक्ति की तलाश कर रहे हैं, और इसी में सुख, शाँति और खुशियाँ देख रहें हैं। विज्ञान, समाज-विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, मानविकी और कलाएँ, कानून और राजनीति-शास्त्र सबके सब इसी तेज आर्थिक विकास के भँवर कुण्ड में समाते जा रहें हैं। प्रकृति, पृथ्वी, पर्यावरण और जलवायु, नदियाँ, भूमि और हवाएँ हैरान-परेशान से मनुष्य के इस तेज आर्थिक विकास माडल को देख रहें हैं और अपनी-अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कर रहें हैं। आकाश, अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी जैसे पंचतत्त्व जिनसे सारा जीव और अजीव-तंत्र निर्मित हुआ है, अचम्भे और उदासी से इस मानव-तंत्र की पृथ्वी-तंत्र से संभावित मुठभेड़ की सम्भावनाओं पर चिंतित और विचारमग्न हो रहें हैं ।

तेज आर्थिक विकास की इसी आपाधापी में पिछले लगभग पाँच दशकों से पर्यावरण और पारिस्थिकी के जानकारों ने इस विकास माडल की धारणीयता पर प्रश्न उठने शुरू कर दिए थे। धीरे -धीरे एक विशाल वैश्विक जन मानस संयुक्त राष्ट्र संघ की अगुआई में हरित चक्रीय विकास के एक नए पर्यावरण संगत माडल को लेकर खड़ा होता जा रहा हैं। अभी हाल ही में दिसंबर, 2023 के पहले सप्ताह में दुबई में 28 वाँ काप (कोऑपरेशन ऑफ़ पार्टीज़) आयोजित हुआ, जिसमें वर्तमान विकास प्रणाली की विसंगतियों पर विचार हुआ और नई विकास प्रणाली अपनाने से जुड़ी संभावनाओं और समस्याओं को समझने का प्रयास हुआ। इससे पहली बार यह भी स्वीकार किया गया कि पर्यावरण और मौसम के बदलाव अर्थात जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ऊष्मिकरण की यह वर्तमान घटना सभी लोगों के जीवन पर असर डाल रही है, और यह नकारात्मक असर भविष्य मे और बढ़ने वाला हैं।

हम सब वर्तमान में जीने के आदी हैं, और जीवन को आसान बनाने वाली सुविधाओं को छोड़ना नहीं चाहते। हम चाहते हैं, कि हमारा तेज विकास, हमारी विलासिता, हमारी सुविधाएँ वैसी ही बनी रहें, और तत्कालीन आर्थिक विकास माडल से उपजी जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, अमूल्य प्राकृतिक संसाधनों की बेतहाशा खपत, जल, जंगल और जमीन की कमियाँ, युद्ध, विध्वंस और आपदाएँ, आपसी संघर्ष और वर्चस्व के झगड़े खत्म हो जाएँ। क्या यह सम्भव है? आत्मकेन्द्रित मनुष्य की जैविक आत्मा और मन मस्तिष्क जब तक अन्य मनुष्यों, जीव-जंतुओं, वनस्पतियों, सूक्ष्मजीवों और पारिस्थिकी-तंत्र के अजीव अवयवों से एक रागात्मक संबंध नहीं बनाएगा, अपने साथ-साथ उन सबके अस्तित्व को स्वीकार नहीं करेगा, हम प्रकृति-संगत धारणीय विकास माडल को पूरी व्यापकता और इसके बहुआयामी स्वरूपों में अपना नहीं पाएँगें।

इस नए वर्ष में आइए स्वयं भी एक ईमानदार प्रयास करें, कि हमारा मनुष्य-तंत्र और पृथ्वी-तंत्र दोनों अखंडित रहें, बचें रहें, सुरक्षित रहें।

राणा प्रताप

(राणा प्रताप सिंह)
www.ranapratap.in

Editorial

2024; The Changing winter and Hot Summer

Different civilizations and cultures around the world have their own ways and means to celebrate their New Years according to their own cultures and traditions. People make new resolutions, new plans, and initiate new beginnings each time for a New Year. However, The Christian New Year celebrated most widely with the high pomp and show at the global scale, has started from January 1st, so wishing you a Happy New Year-2024, especially those who consider it as New Year and celebrate. We congratulate you all on the successes and achievements of the last year-2023. In the Indian context, good wishes, and congratulations to all those who celebrate the beginning of the New Year with their respective cultural festivals like Lohri, Makar Sankranti, Pongal, Bihu, Uttarayan, Villaku etc.

In most parts of India, this English New Year begins in the extreme days of winter, to mark the birth of Holy Jesus Christ and a few days later between 13th and 15th January, Lohri, Makar Sankranti, Bihu, Uttarayan, Villaku, and Pongal, Magh Mela, then Vasant Panchami and Holi follow with a more pleasant weather. Along with the English New Year people celebrate all the festivals with great enthusiasm according to their respective traditions and cultures. Most of the Indians believe that auspicious works can be started again due to the Uttarayan of the Sun. 9th April is celebrated as New yeas as per vikram samvat. If seen in this way, many opportunities to rejoice and celebrate are automatically available in the initial months of 2024. But most of the local festivals and celebrations have evolved from the joy of adaptation to weather and achieving new crop products, hence adverse weather seriously affects our economic, social, and cultural events and behaviours. This year the frost came late but it came in full force. This time the sting of frost is being felt much more than in the previous years. Now it is becoming more difficult than ever to predict the real duration for the changes in the weather in a unpredicted way. In early March the erratic rain, rapid winds and hailstorm has caused huge damage in crop, houses and life of the people. Farmers get distressed more due to such erratic behaviour of the weather year by year.

Due to a few decades of experience and discussions on the environment, climate change and global warming, people have now started understanding the relationship between weather and environment better than before. Due to less frost duration in winter, the yield of many cold season crops like wheat and apple get reduced. Due to increase in high intensity frost even for a shorter duration and continuous coming of icy drops and frosty winds, many crops get damaged in the winter. There are still a large number of families in India, which in the absence of warm rooms and warm clothes, try to protect themselves from the cold by burning bonfires. Their problems increase further as the cold waves increases even for a shorter tenure with higher intensity.

In the last two centuries, new civilizations gradually developed around the world considering the ancient civilizations as backward, which are theoretically based on new forms of knowledge and science, and in practice favouring industry, factories, and urban systems. Industries created artificial products and synthetic toxic waste materials by transforming natural resources with the help of scientific techniques and engineering knowledge. As a global trade, and marketing network has eventually taken the form of a huge powerful global system. The entire economic and scientific discussions started taking their all the stakes utility within this market system, the Development is considered to mean accumulation of wealth, flow of money and the ability to purchase and use consumer goods in abundance for more and more convenient human life. To ensure abundant provision of water, transportation, food items, consumer goods and health protection materials etc. for human beings, many types of knowledge and services under the sciences have been created, industries have been established for its production packaging and distribution and global marketing system has …… strengthened. A globalized marketing system for the utilizing scientific outcomes as marketable technologies and products have emerged mighty during the last two centuries. This ecosystem for the science has been created and managed, by the experts of the multi-national big business groups. The new marketing principles have been formulated for encouraging more and more production and more and more consumption with a logic of creating more and more jobs and reduced prices for the products. In all, there is no considerations for indiscriminate consumption and rapid destructions of the precious natural resources, increasing pollutions in air, water and food systems, accumulation of the created waste materials, high emissions causing climate change and global warming and ecosystem services rendered by the environment.

Since last century we all have been searching for freedom from poverty, misery and starvation of human beings and the solutions are seen in this rapid economic development. The development, otherwise must reflect as

availability of essential needs (though there is no limit to consider the products required by human being as essential), happiness, peace and ease. Unfortunately, this rapid economic growth derived world has absorbed Science, social science, history, economics, humanities and arts, law and political science all in one aim to produce more, market more, consume more and increase the flow of individual and group wealth across the countries. Nature, earth, environment and climate, rivers, land, and winds are watching this rapid economic development model of man with surprise and are expressing their respective reactions as global warming, abrupt change in the climate and increasing disasters. The five elements, sky, fire, air, water, and earth, from which the entire living and non-living systems have been created, are becoming worried and thoughtful about the possible encounter of this human system with the earth system with surprise and sadness.

During this rapid economic development, for the last five decades, experts in environment and ecology had started raising questions on the sustainability of this developmental model. Gradually, a huge global public opinion, under the leadership of the United Nations, is standing up for a new eco-friendly model of green circular economy. Most recently, the 28th COP (Cooperation of Parties) held in Dubai in the first week of December 2023, considered the inconsistencies in the current development system and attempted to understand the possibilities and problems associated with adopting a new developmental pathway. It has been accepted in this cop for the first time that the climate change and global warming are going to impact we all rather than a few specific populations and come out of it, we need to accept that some inconvenience in our comforts can be adopted in need of a sustainable development of our civilisations to come out of such a crisis.

If we insist that our rapid growth, our luxuries, our facilities should remain the same, the current economic development model Cousing the climate change, pollution, reckless consumption of precious natural resources, depletion of water, forests and land, wars, destruction, and disasters can't be restricted. Unless the biological soul and mind, brain of a self-centred human being and his emotional connection with the nature e.g. other human beings, animals, plants, microorganisms, and non-living components of the eco-system will not be accepted, we will not be able to achieve a nature-friendly sustainable development model. We will not be able to adopt the new development models in its comprehensive and multi-dimensional form, unless we change our mind sets, philosophy of convenience and understanding of our own existence being a component of the ecosystem and not an independent super system.

In this new year, let us resolve to put an honest effort that both the human system and the earth system remain working together, remain safe and remain vibrant.

(Rana Pratap Singh)
www.ranapratap.in

विश्व जल दिवस

जल संरक्षण, नदी पुनरूद्धार और चम्बल की शांति पर जलपुरूष डॉ. राजेन्द्र सिंह से बात–चीत

❑ **प्रस्तुति : कृष्णानन्द सिंह**

जलपुरुष के नाम से विख्यात डॉ राजेन्दर सिंह, तरुण भारत संघ अलवर, भारत और अंतर्राष्ट्रीय संस्था बाढ़ और सुखाड़ विश्व–जन आयोग, उलरिका, स्वीडन के अध्यक्ष है, और पिछले चार दशकों से अधिक समय से राजस्थान, भारत और दुनियाभर के अनेक देशों मे जन भागीदारी से प्राचीन देशी तकनीकों मे तरुण भारत संघ के नवाचार से तथा स्थानीय लोगो की सामूहिक भागीदारी से निर्मित छोटे–छोटे बन्धो से पानी का अतिरिक्त बहाव रोककर अनेक नदियों का पुनरुद्धार कर उन्हे सदानीरा बना चुके हैं। उन्हे इन कामों के लिए प्रतिष्ठित मैगसेसे सम्मान एवं विश्वविख्यात स्टाक होम वाटर अवार्ड मिल चुका हैंद्य 22 मार्च, 2024 के विश्व जल दिवस के अवसर पर कहार पत्रिका के प्रधान सम्पादक प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह से जल संरक्षण और नदियों के पुनरुद्धार की प्रक्रिया और उसके जन जीवन की समृद्धि, सामाजिक शांति एवं जैव विविधता के विस्तार पर एक लंबी बात चीत हुई। कहार के पाठकों के लिए प्रस्तुत हैं, उस बातचीत का एक भाग।

राणा प्रताप सिंह– भाई जी पानी को लेकर जीवन लगाने की प्रेरणा कैसे मिली ?

डॉ राजेन्दर सिंह – पानी को लेकर जीवन लगाने की प्रेरणा उन लोगों से मिली, जो पानी के संकट से जूझ रहे थे। जिनकी न तो

जमीन बची थी, और न ही उनका परिवार जो पानी न होने से जमीन के बंजर हो जाने पर उजड़ चुके थे। मेरे शुरुआती दिनों मे मेरे आयुर्वेद से उनका उपचार करने पर जब वे स्वस्थ हुए तो, उनकी मांग थी, कि हमें तो इलाज से अधिक पानी की जरूरत है। पानी आएगा तो सब ठीक हो जाएगाद्य हमारा जीवन सुखमय हो जाएगा। जमीन की और हमारी प्यास बुझाने के लिए हमारी नदियों, जोहड़ों और कुओं में फिर से पानी आ जाएगा तो हमारी खेती लहलहा उठेगी। जीविका वापस आने से बच्चे शहर से वापस आ जाएंगे। लोगों की बातों से प्रकृति और जीवन मे पानी का महत्व जान समझकर मैंने उनकी जरूरत को पूर्ण करने के लिए नदियों, तालाबों और कुओं को पुनर्जीवित करने की चुनौतियों को स्वीकार किया। इसके बाद सूखी जमीन मे पानी लाने की जद्दोजहद और लोगों की समस्याओं का खात्मा करना हमारा लक्ष्य बन गया, जिसने हमें आज पानीदार बनाया और आगे बढ़ाया। ये चुनौतियाँ ऐसे मिलती रहीं तो उनके समाधान के लिए चलते रहना, जूझते रहना जिससे लोगों के जीवन को सुखमय हो, हमारी जीवन यात्रा हैं।

राणा प्रताप सिंह – अब तक कुल कितनी नदियों को पुनर्जीवित किया हैं ?

डॉ राजेन्दर सिंह – अभी तक हमने एक नदी कर्नाटक मे, दो नदी महाराष्ट्र मे तथा आठ नदी उत्तर राजस्थान मे पुनर्जीवित किया है। इसके अलावा आजकल हम चम्बल मे उन्नीस छोटी और सहायक नदियों के पुनर्जीवन के काम मे लगे हैं। चम्बल के इन नदियों मे पानी आने से वहाँ की अशान्ति शांति मे बदलने लगी हैं।

राणा प्रताप सिंह – चम्बल की जल यात्रा बहुत रोचक हैं। जल से समृद्धि और शांति कैसे हासिल हुई? इतने बागियों को आपने शांति का जलदूत कैसे बना दिया ?

डॉ राजेन्दर सिंह– राणा प्रताप सच–मुच यह एक रोचक और चुनौतीपूर्ण यात्रा हैं। इस पठारी इलाके मे धीरे–धीरे खनन शुरू हो गया नदी और जोहड़ सूखने लगे और लोगों, खेतों वनों तथा मवेशियों मे पानी की कमी से समस्याएं बढ़ने लगीद्य आधुनिक विकास से बहुत दूर अलग थलग पड़े इन पठारी इलाकों मे हरियाली घटने से गर्मी बढ़ाने लगी। खनन से धूल और प्रदूषण बढ़ने लगे और बचे हुए पेड़ पौधे भी नष्ट होने लगे। खेती–बारी और पशुपालन के समाप्त हो जाने से लोगों के पास रोजगार नहीं बचा। जीविकोपार्जन के लिए या तो वे शहर जाकर छोटी मोटी मजदूरी करने को विवश हुए या बहुतों ने बागी बनकर हिंसक जीवन अपना लिया। चम्बल के इन बागियों का इतना आतंक था, कि इन बीहड़ों मे लूट पाट, फिरौती के लिए अगवा किया जाना तथा हत्या आम बात हो गयी था। लोग इन इलाकों मे आने से डरते थे। सरकारो ने इन्हे दुर्दांत डाकू घोषित कर इनपर हजारों और लाखों के इनाम रख दिए थे। शुरू मे इन इलाकों मे काम करने मे हमे भी जान का खतरा

था। पर किसी को तो यह खतरा लेना ही था। हमने काम शुरू किया। पारबती–सैरनी नदी में कई दर्जन बंधे और तालाब बरसात के पानी के अनावश्यक बहाव और उसके व्यर्थ हो जाने से रोकने के लिए तरुण भारत संघ और स्थानीय ग्रामीणों की सक्रिय भागीदारी से इसे सदानीरा बनाना संभव हुआ। इसमे तकनीक और दो तिहाई पैसा तरुण भारत संघ ने लगाया और एक तिहाई पैसा लोगों ने स्वयं इकट्ठा किया। अब इन बन्धो के साथ बने जल संग्रहण के तालाबो से इन गांवों को मछली पालन की सहूलियत और इससे वार्षिक आय मिल रही हैं। अब इनकी जमीन और जोहड़ों मे पानी है। नदी सारे साल बहती है। खेतों मे फसल लहलहा उठी और गांवों मे पशुओं के झुंड के झुंड दिखने लगे। पत्थरों पर बने छोटे कुँओं से लगातार जल निकलता रहता है। जमीन के पेट मे पानी भर गया। लोगों के चेहरे पर खुसी दिखने लगी। वे पानी के, समृद्धि के, शांति के, खुशी के, गीत गाने लगे है। अब वे अपने को नंबरदार, पानीदार और इज्जतदार मनने लगे है। अब चम्बल के बागी जिनमे से अनेकों के ऊपर सरकारों ने इनाम रखे थे, आत्मसमर्पण कर, अपनी सजा काट पानी का काम कर रहे है। आज हम सबने उनको जलदूत का सम्मान दिया हैं। पानी से इस क्षेत्र मे शांति आने की यह अनूठी मिसाल है।

राणा प्रताप सिंह – गोदावरी जैसी बड़ी नदी को लेकर आपके नेतृत्व मे जल बिरादरी महत्वपूर्ण काम कर रही हैं। इसके बारे मे कुछ कहे।

डॉ राजेन्दर सिंह – महाराष्ट्र मे जलदूतों का एक बढ़ा समूह गोदावरी के पुनरुद्धार के लिए अत्यंत सक्रिय है। सभी साथियों ने मिलकर सामूहिक रूप से महाराष्ट्र मे जल–संरक्षण के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण काम किया हैं। उन्होंने ने महाराष्ट्र की सभी नदियों को पुनर्जीवित करने का वृहद प्रयास शुरू कर दिया है।

राणा प्रताप सिंह – महानदी के विवादों को सुलझाने मे भी आपकी भूमिका मानी जाती हैं। इस पर कुछ कहें।

डॉ राजेन्दर सिंह – महानदी को लेकर पिछले दस सालों मे उड़ीसा छत्तीसगढ़ मे चल रहे विवाद को लेकर 2006 से प्रोफेसर जी. डी. अग्रवाल जी और मैं काफी लड़े । कुछ सफलताएं पाई और कुछ असफलताएं भी, जिससे सीखते हुए सफलता और असफलता के बीच अभी तक हम जूझ रहे हैं।

राणा प्रताप सिंह – प्रोफेसर अग्रवाल के साथ गंगा की सुचिता को लेकर भी आप चिंतित रहे। गंगा के बारे मे अब आपकी क्या योजना हैं ?

डॉ राजेन्दर सिंह – गंगा एक विशाल नदी है, जो उत्तर भारत की जीवन रेखा है तथा कई राज्यों को प्रभावित करती हैं। गंगा की अविरलता, पवित्रता और सुचिता को लेकर हमारी चिंता बहुत पुरानी हैं, जिसमे प्रोफेसर जी. डी. अग्रवाल जैसे विद्वान जल–योद्धा

आजीवन संघर्ष रत रहे। हाल ही मे अंतर्राष्ट्रीय संस्था 'बाढ़ और सुखाड़ विश्व–जन आयोग, उलरिका, स्वीडन के तहत एक गंगा रिजूवनैशन कौंसिल ऑफ इंडिया की स्थापना की गयी है, जिसमे श्री आर के तिवारी जी तथा प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह के साथ विद्वत जनों, वैज्ञानिको और गंगा पर काम कर रहे साथियों के एक समूह को गंगा पर आगे काम करने की योजना बनाने का जिम्मा दिया गया है। इसमें यह समझ बनी है, कि गंगा के उपर हुए अबतक के सभी सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों का एक वैज्ञानिक आकलन अंतर्राष्ट्रीय जल संस्थान, जोधपुर के साथ मिलकर किया जाए। इसके साथ ही बच्चों और युवाओं के मन और मस्तिष्क से गंगा की भव्यता और इसके महत्व को जोड़ने के लिए गंगा के तटों पर बच्चों के साथ बाल मेले आयोजित किये जायें, जिसकी थीम 'आओ गंगा को जाने' हो। इस कार्य क्रम को करने के साथ–साथ गंगा नदी के दोनों तरफ रहने वाले लोगों को गंगा के लिए काम करने लिए प्रेरित करना और गंगा की महत्ता और आवश्यकता को उनके साथ साझा करना होगा। सरकारों का ध्यान गंगा की बीमारी की तरफ करना होगा, जिससे गंगा कि जो बीमारी है, उसे वे समझे और उसका समुचित इलाज करें। हमें लगता है कि सही समस्याओं पर अभी लोगों का और सरकारों का ध्यान नहीं गया है। गंगा की बीमारी कुछ हैं, इलाज कुछ और हो रहा है, तथा सही लोगों द्वारा इलाज नहीं हो रहा हैं। जिसके कारण गंगा और बीमार हो रही हैं। इसका निदान करना जरूरी है।

राणा प्रताप सिंह – जल–संरक्षण और नदी पुनर्जीवन के लिए आपकी अवधारणा और उसका मूलतत्व क्या हैं ?

डॉ राजेन्दर सिंह – जल संरक्षण और पुनर्जीवन के लिए जो मूलतत्व है, वो ये है कि जब वर्षा के जल को सहेज कर किसी भी नदी के घाटी की संरचनाओं मे समेटा जा सके और उसे बर्बाद न होने दिया जाए, तो नदियां अविरल और निर्मल बनी रहती हैं। बरसात मे अत्यधिक पानी नदी के प्रवाह को बढ़ा देता हैं, जो नदी के घाटी मे जल संग्रहण संरचनाओं के न होने से बहकर बर्बाद हो जाता है और पानी जमीन के भीतर नहीं जा पाता। अगर हम छोटे बंधे और ताल–तलैया बनाकर इस बहते पानी को सही जगहों पर

रोक लें तो मिट्टी मे और वातावरण मे नमी बनी रहेगी। और ये जो जल संरचनाओं की नमी हैं, उससे जमीन के नीचे पानी रिसते रहने से धरती का पेट पानी से भर जाता है। और जब धरती का पेट भर जाता है, तो फिर चारों तरफ जो नदियों का भूजल पुनर्वरण हो जाता हैं, वो नदियों का प्रवाह बढ़ा देता है। जल सरंचना से शुरू होने वाली स्ट्रेच या पुनः जीवित होकर बहुत सारी स्ट्रेच मिलती है, तो बहुत सारी स्ट्रेच मिलकर नदी के प्रवाह को बढ़ा देती हैं। और फिर बहुत सारी छोटी नदियाँ और स्ट्रेच मिलकर एक सदानीरा नदी मे बदल जाती हैं। यही नदी की अवधारणा है। पानी का बहाव सात तरह के चक्रों से गुजर कर नदी का रूप लेता हैं। नदी अपने उद्गम से शुरू होकर जब समुद्र मे मिलती हैं, तो नदी का मीठा पानी समुद्र के खारे पानी से मिलकर समुद्र मे समा जाता है। नदियाँ वो होती है जो अविरलता निर्मलता के साथ आजादी से बहती है। नदियों का आजादी से बहना ही नदियों के जीवन को सदानीरा बनाता है। इसलिए नदी का बनना और बहते रहना इसकी घाटी मे बनी जल संरचनाओं से ही संभव हैं।

राणा प्रताप सिंह – स्वीडन से शुरू हुए बाढ़ और सुखाड के लिए विश्व जन सम्मेलन के नामित अध्यक्ष है। इसमे अब तक की उपलबधिया और भविष्य की क्या योजनाएं हैं ?

डॉ राजेन्दर सिंह – स्वीडन से शुरू हुए बाढ़ और सुखाड़ विश्व जन आयोग के पिछले साल की जो गतिविधियाँ हैं, उसके तहत विश्व भर मे कुल 500 से अधिक कार्यक्रम आयोजित हुए। कई देशों मे लोगों ने बाढ़–सुखाड़ से मुक्ति की युक्ति पर गहरा प्रयास किया तथा जल संरक्षण पर अनेक अभियान चलाए। बाढ़–सुखाड़ विश्व जन आयोग, जहा–जहां लोग तैयार होकर इस काम को करने के लिए आगे बढ़ते है, वहाँ–वहाँ आयोग की मुख्य समिति जाकर मदद करती हैं। सुखाड़ बाढ़ विश्व जन आयोग का लक्ष्य है, कि दुनिया के सभी क्षेत्रों में लोग जल–संरक्षण मे भागीदार बनें और पानीदार बने तथा पूरी दुनिया बाढ़ सुखाड़ मुक्त हो जाए।

धारावाहिक

नदी का नाद

❑ प्रो० राणा प्रताप सिंह

मित्रों नमस्कार । इस अंक से कहार बहुभाषाई पत्रिका में मैं संपादकीय के अतिरिक्त एक पुस्तक के हिस्से से नाम से एक नया कालम शुरू कर रहा हूँ, जिसमें मैं अपनी नई पुरानी यात्राओं से मिले अनुभवों को आप सबके साथ साझा करता रहूँगा । यात्राओं में जब हम नई जगहों पर जाते हैं, नए लोंगों से मिलते हैं, नवीन अनुभव करते हैं, तो जीवन और जगत के अनेक नये अनुभव हमें प्राप्त होते रहते । उनसे कई बार हमें नया ज्ञान अर्जित होता और कई बार तो नये जीवन दर्शन मिलते हैं । ये आलेख आपसे संवाद कर पाएँ तो अपने मन की बात ज़रूर बताइएगा । कहार पत्रिका के पते पर ईमेल या पत्र भेज कर । इन मुद्दों पर आपके विचार भी हम लोंगों से साझा करेंगें ।

–राणा प्रताप सिंह

चलते –चलते अचानक मुझे एक अस्पष्ट सी ध्वनि सुनाई दी। मैंने ध्यान से कान दिया तो लगा कि यह आवाज थोड़ी दूर आगे ठीक बगल से गुजरती हुई सैरनी नदी के बहाव की थी । मैंने पूरे मनोयोग से उसे सुनने और समझने की कोशिश की पर गाड़ी की रफ्तार और अपने भीतर और बाहर के शोर में नदी के नाद का अर्थ खोल पाना मेरे लिए संभव नहीं हो पा रहा था । वह एक विशेष यात्रा थी , चंबल के बीहड़ों में पानी , बागी , बीहड़ और बाँधों की यात्रा । उस दिन हम सब पर्यावरण प्रेमियों के उस छोटे से परंतु बहुत ही महत्वपूर्ण समूह में एक साथ इस पुनर्जीवित नदी के पुनरुद्धार और पानीदार होते ही बड़ी संख्या में चंबल के बागियों के समर्पण की कहानी देखने और सुनने जा रहे थे। उस दिन हम सबके सम्मुख डाकू कहे जाने वाले सैकड़ों बागी नौजवानों और अब शाँति एवं संतोष से जी रहे अधेड़ तथा बुजुर्ग लोंगों के मन के बदलने , भविष्य के लिए बड़े फैसले लेने तथा जीवन के नए दौर में नवीन परिवर्तन के साथ तालमेल बैठा कर सहज तरीके से नया जीवन जीने के प्रयास में पानी की उपलब्धि को सबसे बड़ा कारण माने जाने की स्वीकृति को देखने , जानने और समझने का अनूठा अवसर था । उस अत्यन्त दूरस्थ एवं आर्थिक ,शैक्षणिक तथा सामाजिक व्यवस्थाओं की उपलब्धि न होने से बहुत पिछड़े माने जाने वाले क्षेत्र में आयी इस विशिष्ट खुशहाली तथा अन्न – समृद्धि एवं चिर – शाँति के पीछे इस नए तरह की जल क्रांति की कहानी के हम सब उस दिन मात्र पाठक नहीं , बल्कि दर्शक और गवाह बनने जा रहे थे । मेरे लिए इस अदभुत अवसर के बारे में सोचना स्वयं में बहुत सुखद और आहलादिक करने वाला अहसास था।

हमारी यह विशिष्ट यात्रा खनन से नष्ट हुए इस पठारी क्षेत्र के गावों में एक जलयोद्धा के अनवरत प्रयासों से सामूहिक पुरुषार्थ और आपसी ताल – मेल के अनूठे प्रयोग की साक्षी होने की चेष्टा थी । वह दिन हम सबके लिए एक नष्ट हो गयी नदी और उसकी सभ्यता के पुनर्निर्माण और पुनर्जागरण तथा पानी मिल जाने से जमीन की ताकत में हुई अविश्वसनीय वृद्धि से उन गावों की एक नई अर्थव्यवस्था , एक नये समाजीकरण और एक खुशहाल सामूहिक जीवन के पुनर्निर्माण का गवाह बनने का समय भी था ।

हम कुल सात लोग थे । भाई जी जलपुरुष डा राजेंदर सिंह और मेरे अतिरिक्त इस समूह में पाँच और बहुत ही महत्वपूर्ण भारतीय और विदेशी मनीषी , विचारक , वैज्ञानिक , प्रशासक और शोधार्थी थे ।हम जैसे –जैसे चंबल क्षेत्र में भीतर बढ़ रहे थे , हमारे भीतर की हलचल और उत्सुकता वैसे –वैसे ही बढ़ती जा रही थी । दूर तक फैली हुई वीरानी और वातावरण की उदासी भरी गर्मी हमें अनायास चिंतित कर रही थी । बार –बार मन में प्रश्न उठने लगता कि इस विशाल बंजर और शुष्क क्षेत्र में लोग , पशु– पक्षी , कीड़े – मकोड़े और वनस्पतियाँ कैसे रहते हींगें भला ? बिना पानी उनकी प्यास कैसे बुझती होगी और बिना पेड़ उनको छाया कैसे मिलती होगी ? एक तो गर्मी , दूसरी ऊबड़ –खाबड़ चढ़ाई , तीसरी प्राणवायु ऑक्सीजन की कमी और पानी का अभाव , कैसा दुरूह जीवन है , यहाँ का , यह सोच कर हमारा मन भी व्याकुल हो रहा था।

सुबह –सुबह जलपान कर प्रख्यात जैन तीर्थ श्री महावीर जी के रात्रि विश्राम स्थल से हम सब तीन गाड़ियों के काफिले में चंबल के उन गाँवों की ओर जा रहे थे , जहाँ ग्रामीणों द्वारा सामूहिक रूप से अपने और तरुण भारत संघ के दर्शन , ज्ञान , अनुभव , खर्च और श्रम से नदी के बनाए जा रहे वे अनूठे बाँध थे , जो वर्षा ऋतु में नदी में आये तेज बहाव के समय पानी को आगे जाकर बर्बाद होने से रोक लेते थे । इससे सूखे दिनों में न सिर्फ़ लोंगो, पशुओं , खेतों तथा वनस्पतियों को पानी मिल जाता, बाँधों के पीछे बने बड़े तालाबों में से पानी रिस – रिस कर लगातार जमीन की नमी को बढ़ाता रहता और अतिरिक्त जल जमीन के छिद्रों से रिसते –रिसते भूगर्भीय जल में लगातार वृद्धि करता रहता । हमारे काफिले को श्री महावीर जीसे चले ३–४ घंटे हो गए थे और धीरे –धीरे वातावरण में गर्मी बढ़ने लगी थी। सूरज के सिर की सीध में आ जाने से धूप में तपिश बढ़ने लगी थी , जबकि दिसम्बर की धूप को इस इलाके में इतनी तेज नहीं होनी चाहिए थी । हम सुबह –सुबह ठंढ में चले थे , तब शरीर को मोटे गरम कपड़ों से ढकना पड़ा था , अब वही मोटे कपड़े भारी और उबाऊँ लगने लगे थे ।

कहना न होगा कि इन कुछ घंटों की यात्रा के पहले मुझे पानी की इस अनूठी आवाज और इस क्षेत्र की शुष्कता तथा कठोरता का कोई अनुमान नहीं था , जबकि करीब पाँच दशकों से मैं एक विद्यार्थी, शोधार्थी , शिक्षक और विचारक के तौर पर पानी , प्रकृति , पर्यावरण , पारिस्थिकी और जीवों तथा अजीवों के बीच के संबंधों को लेकर लगातार शोधरत और अध्ययनरत हूँ । मैंने लगातार विज्ञान और पर्यावरण अध्ययन के अनेक सिद्धांतों और स्वरूपों को एक

अकादमिक व्यक्ति के रूप से देखा था तथा मनुष्य को पृथ्वी तथा प्रकृति की एक विशिष्ट जैविक इकाई के रूप में जानने – समझने की कोशिश की थी । मुझे उस समय अहसास हो रहा था , कि हम मनुष्य को केंद्र में रखकर प्रकृति की बुनावट और इसके अंतरसंबंधों को समझने की कोशिश करते रहते हैं , जबकि पृथ्वी – तंत्र ने मनुष्य को अपने प्रकृति – तंत्र के एक अवयव के रूप में निर्मित किया है , और यहीं से हमारे अध्ययन और शोध का सीमांकन शुरू हो जाता । हमें समझना होगा कि मनुष्य इस पृथ्वी – तंत्र के केंद्र में नहीं है , और हमें अब अपने पर्यावरण तंत्र के बुनावट को नए सिरे से अध्ययन करना है , इसके स्वरूप को नए पर्यावरणीय दर्शन से व्याख्यायित करना है और नवीन पर्यावरणीय सिद्धांत गढ़ने हैं । अगर हमारी इस पृथ्वी –तंत्र के केंद्र में कोई है , तो शायद वह जल है , जमीन है और वनस्पतियाँ हैं , जिनसे जीवन चक्र का निर्माण और पोषण होता है , वैसे तो चक्रीय व्यवस्थाओं में चक्र के सभी विंदु अपने –अपने स्थान पर एक केंद्र बनाते हैं । मुझे लगता है कि जल और प्राणवायु ही ऊर्जा तथा पदार्थों के बहाव की अनगिनत अनूठी व्यवस्थाओं तथा जैविक विकास–तंत्र का निर्माण करते हैं , जो इस अनूठे पृथ्वी– तंत्र को हर एक जीव –अजीव के साथ –साथ इस अंतहीन ब्रह्माँड – तंत्र से भी जोड़ता और तोड़ता रहता है । इस विशाल ब्रह्मांड के भीतर हमारे पृथ्वी – तंत्र में एक अवयव की तरह उत्पन्न मनुष्य ने अपने कौशल और अत्यंत जटिल मस्तिष्क की विलक्षण क्षमता का प्रयोग कर धीरे–धीरे एक अपना अप्राकृतिक मनुष्य – तंत्र स्थापित कर लिया है , जो अपने निर्माता पृथ्वी – तंत्र से अनजाने में ही मुठभेड़ की मुद्रा में खड़ा हो गया है ।

हम मनुष्यों के जिस तरह के आपस में विविध प्रकार के संबंध होते हैं , उसी तरह हमारे संबंध वनस्पतियों , वृक्षों , पक्षियों , पशुओं , पहाड़ों , पानी , धूप , हवा आदि सभी जीवित –अजीवित जीवों और पदार्थों से होते हैं । जिस तरह हमारे मनुष्यवत् संबंध हमारी मंशा और व्यवहार से परिलक्षित होते हैं , और दूसरों को आकर्षित या विकर्षित करते रहते , उसी तरह हमारे मनुष्यतर संबंध भी हमारी नीयत और व्यवहार से ही संचालित होते हैं । मनुष्योतर जीव और अजीव भी उस सकारात्मक तथा नकारात्मक विचारों और ऊर्जा पुंजों से हमारे संबंधों को महसूस करते और उसी के अनुसार प्रतिक्रिया देते हैं ।

हमें इस यात्रा में बार–बार यह अहसास हो रहा था , कि मनुष्य के सम्बन्ध हमारे आस–पास के अनेक प्राकृतिक जैविक तथा अजैविक अवयवों से वैसा नहीं है , जैसा होना चाहिए । नदियों में नाद , जमीन में जल , पेड़ –पौधों में वह हरियाली भरी चमक , धूप में कोमलता और पशु –पक्षियों की चहचहाहट वैसी नहीं थी , जैसी वैसे कम घनी आबादी वाले क्षेत्रों में होनी चाहिए क्योंकि वहां पेड़ नहीं थे। पशु नही थे, लोग नही थे। यात्रा के शुरू –शुरू के कुछ घंटों में तो सड़क के दोनों तरफ़ खनन , वीरानगी और उदासी का अजीब सा घाल –मेल नजर आता था जिसने हमारे मन को कसैला कर दिया था ।

चलते –चलते क़रीब तीन घंटे बीत गए होंगें । हम चढ़ाई और उतार वाले पतले सर्पिले रास्ते से आगे बढ़ते जा रहे थे कि अचानक आसपास के वातावरण में एक बदलाव सा दिखने लगा । जलपुरुष ने एक मोड़ पर गाड़ी रुकवाई । तीनों गाड़ियाँ एक के पीछे दूसरी एक पंक्ति में सड़क के किनारे मुख्य रास्ता छोड़कर खड़ी हो गयी थी । हम सब उतर कर उनके साथ एक छोटे से टीले की ओर बढ़ गए । वहाँ बहुत देर के बाद एक हरा –भरा पुराना पेड़ मिला । भाई जी ने टीले पर चढ़ कर उँगली उठाई , उन गावों और खेतों की ओर जिधर हरियाली थी , हलचल थी और पानी था । वह सैरनी नदी का पुनर्जीवित क्षेत्र था । उधर पेड़ो के झुरमुट में अनेक पशु – पक्षी थे , तालाब थे और खेत थे । खेतों के बीच गाँव थे और पास के एक गाँव में झाँक कर महसूस हुआ , कि उन गावों में चलते –फिरते, हँसते – मुस्कुराते , पशु चराते , खेती –बाड़ी करते बड़ी संख्या में बच्चे , किशोर , जवान , प्रौढ़ और बुजुर्ग पुरुष और महिलाओं के अनेकों समूह अपने –अपने काम में लगे थे । रास्तों में स्कूल की ओर जा रहे या स्कूल से आ रहे पढ़ने जाने वाले बच्चे थे , हालाँकि अनेक गावों से स्कूल अब भी कई किलोमीटर दूर थे और वहाँ पहुँचने के रास्ते बच्चों के हिसाब से कठिन था ।

पानी के स्रोतों के किनारे कपड़े धोते , नहाते और खेलते पुरुष , स्त्रियों और बच्चों के झुंड के झुंड खुश और अपने काम में मग्न नजर आ रहे थे, जैसे उनके आस –पास पानी का उपलब्ध होना ही उनके मन की मुराद हो । पृथ्वी के प्राकृतिक तंत्र को अपने ज्ञान – विज्ञान और अपनी आकांक्षाओं से प्रभावित करने वाले एक आर्थिक– राजनीतिक मनुष्य – तंत्र को जानने – समझने की कोशिश में अब तक का लंबा जीवन खपाने के बाद , उस दिन चंबल के बीहड़ो में सैरनी नदी के किनारे जलपुरुष और अन्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण साथियों के साथ विचरण करते हुए , बात करते हुए , सैकड़ों ग्रामीणों से संवाद करते हुए , उनसे प्रश्न करते हुए और उनके प्रश्नों के उत्तर तलाशते हुए मैं पानी को जिस प्रकार एक नए दर्शन और नई सूझ – बूझ से समझ पा रहा था , यह पहले से कुछ अलग सा था । पूर्वी उत्तर प्रदेश के मेरे अपने तराई क्षेत्र में पानी का मतलब चम्बल के इस सूखे इलाके में पानी के मतलब से एकदम अलग था ।

उस दिन मुझे एक नयी बात समझ में आयी कि नदी अपने बाशिंदों से अलग –अलग जगहों पर अलग –अलग तरह से संवाद करती है । कि पानी का मतलब तराई में और सूखे पठारों के गावों और क़स्बों में अलग –अलग होता है । इस यात्रा में मैं इस तरह की अनेक बातें पहली बार अनुभव कर रहा था । मुझे लगा कि हमारे पैरों के आस –पास की मिट्टी भी अलग–अलग स्थितियों में अलग –अलग लोंगों के लिए अलग–अलग अर्थ खोलती है । मैं अपने इस नयी पाठशाला में अपनी अनूठी प्रकृति नये –नये पाठ पढ़ कर इस नवीन ज्ञान से अचम्भित था ।इस छोटी सी यात्रा में पानी , प्रकृति और वहाँ के लोंगों के साथ हमारा एक अलग रिश्ता बन रहा था , और मेरे लिए यह एक अनूठा और उत्तेजक अनुभव था ।मुझे स्पष्ट लगने लगा था कि मशीन मनुष्य की मदद करे तो ठीक है , अगर वह उसको नियंत्रित कर उसका मनमर्दन करेगी तो मानवता का विकास नहीं उसका विनाश ही होगा।

...अगले अंक में जारी

जैव विविधता

Peer Reviewed

सी...सी.....चटपटी करारी तीखी मिर्च और उसकी विविधता

❑ मधु प्रकाश श्रीवास्तव

आपने कुछ ऐसा खाया कि बस मुंह से निकले सी... सी... कुछ याद आया हम बात कर रहे है विटामिन सी से युक्त चटपटी, तीखी और मुंह के स्वाद को बदलने वाली मिर्च की। जी हॉ, मिर्च प्राकृतिक रूप से मध्य या दक्षिणी अमेरिका में पायी जाती है वैसे इसका उदगम स्थान ब्राजील को माना गया है। यह सोलेनेसी कुल की सदस्य है। इसका वैज्ञानिक नाम कैप्सिकम है। कुछ देश जैसे पेरू, बोलिविया, इक्वाडोर आदि मे इसे मूल फल भी कहा जाता है। भारत में जो मिर्च तीखी होती है उसे लोग 'चिली' कहते है। क्या कोई मिर्च मिठी भी हो सकती है? जी हॉ, भारत में पायी जाने वाली मिठी मिर्च का 'शिमला मिर्च' के नाम से जाना जाता है।

चित्र न0–1 विभिन्न प्रकार की मिर्च

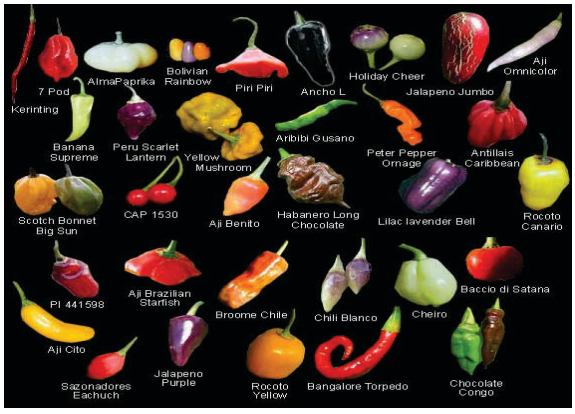

चित्र न0–2 विभिन्न आकार व रंग की मिर्चे

विवरण –

मिर्च पूरे विश्व में पायी जाती है सबसे अधिक प्रजाति कैप्सिकम एनुअम की पायी जाती है और दूसरी प्रजातिया दक्षिणी भारत, उत्तर पूर्व भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका, अफ्रीका आदि देशो में पायी जाती है। भारत में मुख्यतः आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, अरूणाचल प्रदेश व उत्तर प्रदेश में होती है। अगर व्यावसायिक खेती की बात करे तो उत्तर प्रदेश, हिमांचल प्रदेश, उत्तराखण्ड आदि इसके मुख्य उत्पादक प्रदेश है।

जलवायु व मिट्टी–

मिर्च के पौधे पर वातावरणीय कारक का प्रभाव पड़ता है उसके फल देने, पुष्प खिलने आदि पर तापमान तथा आर्द्रता दोनों का प्रभाव होता है। सामान्य उत्पादन करने के लिये इसे दिन में 20–30°ब और रात्रि में 15–22°ब का तापमान चाहिये होता है। इसके नीचे या ऊपर तापमान बढ़ने पर इसकी वृद्धि रूक जाती है। फल उत्पादन के लिये 15°ब के ऊपर का तापमान चाहिये होता है। यह पाले आदि से बेहद संवेदनशील होती है। प्रकाश प्रखरता भी इसके उत्पादन को बेहद प्रभावित करती है। इसकी उचित वृद्धि के लिये 39292–86112 लक्स की आवश्यकता होती है। इसके अधिक उत्पादन के लिये मिट्टी का अम्लीय (पी०एच0 मान 5 से 6) होना चाहिये। मिर्च के लिये अनुकूल परिस्थिति, धूप की अधिकता व आर्द्रता कम होना है।

पौधा –

मिर्च का पौधा एकवर्षी, द्विवर्षी या बहुवर्षी होता है। इसकी विभिन्न प्रजातियों में पुष्प, फल का आकार, प्रकार और रंग भिन्न–2 होता है इसके फल को बेरी नाम से जाना जाता है। फलों का आकार मटर जैसे गोल या लम्बा दोनों प्रकार से होता है अर्थात् मटर की फली से लेकर बड़ी घड़ीनुमा होता हो अगर फल के अवयक की बात करे तो 38ः पेरीकार्प, 56ः बीज, 2ः आन्तरिक भित्ती व 4ः डंडी होती है। एक फल लगने से लेकर पकने में लगभग 60–70 दिन का समय लेते है। फल का रंग उनकी प्रजाति के ऊपर निर्भर करता है। शुरूवात में यह हरा होता है, फिर जैसी प्रजाति होती है वैसा रंग लेता है जैसा हल्का पीला, बैगनी, गहरा लाल या नारंगी हो जाता है। उत्पादन योग सभी प्रजातियों द्विगुणित होती अर्थात इसमें जो क्रोमोसोम पाये जाते है उनका नम्बर (2दत्र24) होता है।

प्रजातियां –

कैप्सिकम की लगभग 20–25 प्रजातिया पूरे विश्व में पायी जाती है उनमे से लगभग 20 जंगली तथा 5 खाने वाली है। ये खाने वाली प्रजातियां निम्न प्रकार से है :–

- कैप्सिकम एनुअम
- कैप्सिकम फ्रटेसेन्स

वनस्पति विज्ञान विभाग, महर्षि यूनिवर्सिटी ऑफ़ इनफार्मेशन टेक्नोलॉजी, लखनऊ, भारत'
ई–मेलः madhusrivastava2010@gmail.com

- कैप्सिकम बैकेटम
- कैप्सिकम चाइनेन्स
- कैप्सिकम प्यूबेसेन्स

भारत में तीखी मिर्च तथा मीठी मिर्च दोनो का उत्पादन होता है। जो तीखी मिर्च होती है उसे कैप्सिकम फ्रटेसेन्स कहते है, यह झाड़ी रूप में होती है। इसकी पत्तियां छोटी व कम चौड़ी होती है। इसके फल गुच्छो में व सीधे होते है जबकि मीठी मिर्च को कैप्सिकम एनुअम कहते है। इसकी पत्तियां बड़ी व चौड़ी होती है तथा फल एकल, लटकने वाले होते है। तीखी मिर्च में 0.22: केप्साइसिन पाया जाता है जबकि मीठी मिर्च में 0.1: केप्साइसिन पाया जाता है।

भारत ने तीखी और मीठी मिर्च की कई प्रजातियां विकसित की है जो उत्पादन में अधिक मात्रा तथा पौष्टिक गुणों से भरपूर है। अगर शिमला मिर्च की बात करे तो अकी गौरव, अकी वसन्त, अकीर मोहनी, काल वन्डर आदि उन्नत किस्मे है। यह प्रजातियां बहुत जल्दी ही लगभग 4–5 महीने में खाने लायक हो जाती है और इनका उत्पादन लगभग 120 से 150 कुन्तल/हेक्टेयर होता है। पुसा सदाबहार, उज्जवल, कोयम्बटूर, भाग्यलक्ष्मी आदि तीखी मिर्च की उन्नत प्रजातियां है। कुछ संकर प्रजातियां जैसे इन्दिरा, हीरा, विक्रान्त, महाभारत आदि अच्छी उत्पादक वाली मिर्च है।

चित्र न0–3 कैप्सिकम एनुअम

चित्र न0–4 कैप्सिकम चाइनेन्स

चित्र न0–5 कैप्सिकम फ्रटेसेन्स

चित्र न0–6 कैप्सिकम प्यूबेसेन्स

चित्र न0–7 कैप्सिकम बैकेटम

पोषक तत्व व उसके अवयव –

अगर मिर्च के 100 ग्राम खाने वाले भाग को ले तो उसमे निम्न पोषक तत्व तथा उनका प्रतिशत निम्न प्रकार होता है –

तत्व	हरा मिर्च	लाल मिर्च
पानी	84	86
ऊर्जा (कैलोरी)	49	45
वसा (ग्राम)	1.98	1.07
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	10	9
प्रोटीन (ग्राम)	1.98	1.94
विटामिन सी (ग्राम)	140	86
विटामिन ए (ग्राम)	180	4770
फाइवर (ग्राम)	2.5	1.8
कैल्शियम (मि०ग्रा०)	34.0	11.0
आयरन (मि०ग्रा०)	2.6	0.4
फास्फोरस (मि०ग्रा०)	61	47

उपरोक्त तुलनात्मक अध्ययन से ये निष्कर्ष निकलता है कि लाल मिर्च में विटामिन सी का अधिक प्रतिशत नही होता है और उसमे पोषक तत्व भी हरे मिर्च से कम होते है। अर्थात खाने में हमेशा हरी मिर्च का उपयोग करना चाहिये।

मिर्च में विभिन्न प्रकार के वर्णक होते है जैसे – कैरीटीनॉयड (36%), वीटा कैरोटीन(10%), वायोलाजेन्थिन (10%), किप्टोकैप्सिन (6%)। मिर्च का लाल रंग कैप्साजेन्थिन व कैप्सोरूबिन तथा पीला रंग कैरोटीन और वायोलाजेन्थिन के कारण होता है।

खनिज लवण –

मर्च, विटामिन व खनिज लवणों से भरपूर स्त्रोत है इसमें विटामिन–सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो जुकाम, घावो का भरने व खून के थक्को को साफ करने में मदद करता है इसमे विटामिन–ए भी पाया जाता है इस विटामिन से त्वचा व आंखे साफ होती है।

मिर्च का रासायनिक संगठन –

यह एल्केलायड कैप्साइसिन के कारण मिर्च में तीखापन होता है। कैप्साइसिन कुल कैप्साइसिनाइंड का लगभग 69% होता है। कैप्साइसिन का रासायनिक सूत्र $C_{18}H_{27}NO_3$ है इसका आई०यू०पी०ए0सी० नाम एन–3, मिथॉक्सी 4, हाइड्रॉक्सिल बेन्जाइल, 8 मिथाइल नॉन–ट्रॅन्स 5– इनामाइड है। इसका अणुभार 305.46, गलनांक 65°C व क्वथनांक 81°C होता है। मिर्च के पेरीकार्प में 0.17: से 0.58:ए आन्तरिक भित्ति में 6.6: से 7.7: और बीज में 0. 024: कैप्साइसिन पाया जाता है। मिर्च के कैप्साइसिनाइड़ में कई अन्य घटक भी होते है जैसे–

1. डाई हाइड्रोकैप्साइसिन (22:)
2. नॉर हाइड्रोकैप्साइसिन (7:)
3. मोनो हाइड्रोकैप्साइसिन (7:)
4. होमो कैप्साइसिन (1:)

स्कोलविल हीट यूनिट (एस०एच०यू०) –

किसी भी मिर्च का तीखापन एस०एच०यू० के द्वारा ज्ञात किया जाता है। कैप्साइसिन की मात्रा भौगोलिक परिस्थितियों और

प्रजातियो के अनुसार बदलती है। नागा जोलोकिया को विश्व में सबसे तीखी मिर्च कहा है। इसमें कैप्साइसिन की मात्रा दस लाख एस०एच०यू० होती है इसको भूत जालोकिया के नाम से भी जाना जाता है।

एक प्रजाति लाल सबीना हाबानीरो में 5,50,000 एस०एच०यू० कैप्साइसिन होता है। इसके फल पहले हरे रंग के होते है और फिर नारंगी रंग के हो जाते है। इसकी भित्ति में सर्वाधिक कैप्साइसिन पाया जाता है चूंकि बीज भी उसी के साथ जुड़े रहते है इसलिये इसके बीज भी तीखे हो जाते है।

हाई प्रेशर लिक्विड क्रोमेटोग्राफी (एच0 पी0 एल0 सी0)–

कैप्साइसिन की तीव्रता को एच०पी०एल०सी० विधि के द्वारा ज्ञात किया जाता है इस विधि में मिर्च को सुखाकर उसका पहले पाउडर बना लेते है। फिर उसके सार को निकाल कर एच०पी०एल०सी० में इंजेक्शन दिया जाता है।

इस विधि के द्वारा केवल तीव्रता ही नही अपूर्ति उसके घटक व उनकी मात्रा को भी ज्ञात किया जा सकता है। तीखेपन के आधार पर मिर्च को निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत किया जाता है–

एस०एच०यू०	मिर्च प्रजातिया
0–100 एस०एच०यू०	मीठी मिर्च या शिमला मिर्च
500–1000 एस०एच०यू०	न्यू मैक्सिकन चिली
1000–1500 एस०एच०यू०	इस्पानोला मिर्च
1000–2000 एस०एच०यू०	एन्को और पासिला मिर्च
1000–2500 एस०एच०यू०	कास्केबिल और चेरी मिर्च
2500–5000 एस०एच०यू०	जलपीनो मिर्च
5000–30000 एस०एच०यू०	सीरैनो मिर्च
15000–30000 एस०एच०यू०	डी आरबोस मिर्च
30000–50000 एस०एच०यू०	साइने और टाबास्को मिर्च
50000–100000 एस०एच०यू०	चिलीप्टिन मिर्च
100000–350000 एस०एच०यू०	स्कोच बोनेट थार्ड मिर्च
200000–300000 एस०एच०यू०	हाबानीरो मिर्च
1000000–3000000 एस०एच०यू०	नागा जालोकिया (भूत जालोकिया)
160000000 एस०एच०यू०	शुद्ध कैप्साइन

चित्र न0–8
भूत जालोकिया **(पौधा)**

चित्र न0–9
तीखी मिर्च (भूत जालोकिया)

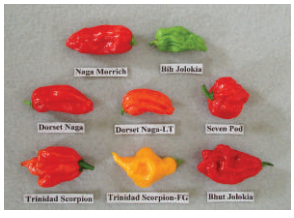

चित्र न0–10
भूत जालोकिया **की विभिन्न प्रजातियां**

चित्र न0–11
मीठी मिर्च (शिमला मिर्च)

अनुप्रयोग –

- जो मिर्च में कैप्साइसिन पाई जाती है उसका उपयोग आयुर्वेदिक व होम्योपैथिक दवा बनाने में किया जाता है।
- जब कोई अनाज का भण्डारण किया जाता है तो इसका उपयोग करते है।
- कैप्सासिन एक एन्टीआक्सीडेन्ट होता है ये लार ग्रंथियो व दिमाग को भी उद्दीपित करता है। और एक होमोन 'एनडार्फिन' का स्त्रवित करना है। ये एक प्राकृतिक दर्द निवारक है।
- कैप्ससिन से गोले भी बनाये जाते है तथा पुलिस द्वारा आक्रमणकारियों को भगाने में इसका भरपूर उपयोग होता है।
- आज कल कैप्सासिन का उपयोग दॉतो का मंचन बनाने में किया जाता है। इस पेस्ट को करने से दॉतो में कभी बीमारी नही होती है।
- अगर मुंह में छाले हो जाते है तो कैप्सासिन की सही मात्रा लेने से छाले ठीक हो जाते है।

चित्र न0–12 सूखी लाल मिर्च

चित्र न0–13 पिसी लाल मिर्च

चित्र न0–14 बाजार मे बिकने हेतु उत्पाद

निष्कर्ष –

मिर्च में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। शिमला मिर्च को, जिसमे अधिक चरपराहट नही होती है उसे सब्जी या सलाद के रूप में उपयोग करते है। लाल, हरी, बैंगनी, नारंगी, पीली तरह–तरह की मिर्च बाजार में उपलब्ध होती है। इन्हे सब्जी या सलाद के अलावा लोग अपने घर में शोभाकरी पौधों के रूप में उपयोग करते है। मिर्च में एक रंजक ओलियोरेजिन पाया जाता है इसलिये इसको खाद्य रंजक के रूप में उपयोग करते है। आधुनिक भविष्य का मानना है कि मिर्च के पाया जाने वाला कैप्साइसिन कई बिमारियों में एक कारगार औषधि के रूप में विकसित हो सकता है।

कृषि तकनीकी

Peer Reviewed

जैविक खेती का आधारः वेस्ट डीकम्पोजर

❑ डॉ. रणधीर नायक, डॉ. रुद्र प्रताप सिंह एवं प्रो. डी.के. सिंह

जैविक खेती में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशियों के स्थान पर जीवांश खाद, पोशक तत्वों, जैव नाशियों आदि का उपयोग किया जाता है जिससे न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनी रहती है बल्कि पर्यावरण भी प्रदूशित नहीं होता तथा कृशि लागत घटने व उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ने से कृशक को अधिक लाभ मिलता है। यह देखने में आया है कि रासायनिक स्रोतो का प्रयोग अंधाधुंध होने से पर्यावरण प्रदूशित तथा भूमि की उर्वरा शक्ति का ह्रास् होने लगा जो आज तक निरंतर जारी है। जो मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ सभी जीवों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। कृशि में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशियों व रोगनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से भूमि की विशाक्तता बढ़ गई जिससे बहुत से लाभदायक जीवाणु मर गए तथा भूमि अनउपजाऊ होती गई, अब वह समय दूर नही है कि अगर कृशि रसायनों पर पाबन्दी नही लगाई गई तो सम्पूर्ण भूमि बंजर हो जाएगी। भूमि की उर्वरा शक्ति की कमी के कारण किसान उत्पादन बढाने के लिए महंगे रसायनो का प्रयोग कर रहे हैं। जिससे मानव व पशुओं के स्वास्थ्य पर दूशित पदार्थो के सेवन के कारण भारी प्रभाव पड़ रहा है। इन समस्याओं से निजात पाने का तरीका जैविक खेती है जो भूमि स्वास्थ्य, पशु स्वास्थ्य तथा मानव स्वास्थ्य को सुधारता है, बिना पर्यावरण को नुकसान पहुचाये। कार्बनिक पदार्थो का अपघटन मृदा में विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवों द्वारा किया जाता है, मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों की कई प्रजातियॉ मृत जानवरों, जीवों व सड़े–गले पौधों को खाकर जीवित रहते हैं, इनमें से बहुत से सूक्ष्म जीव दिखाई नही देते हैं परन्तु वे मृदा में पोशक तत्वों के चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऐसे सूक्ष्म जीव जो मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थो का विघटन करने का काम करते हैं उन्हें डीकम्पोजर या अपघटक कहते हैं। वे सूक्ष्मजीवों, मृत पौधों के अवशेश, पशु अपशिश्ट और मृत जानवरों का सेवन करके पोशक तत्व प्राप्त करते हैं, जब ये जीव मर जाते तो इनके अपघटन के द्वारा ग्रहण किए गए पोशक तत्व मृदा में मिल जाते हैं जिन्हें पौधे आसानी से अवशोशित कर लेते हैं। सूक्ष्म जीवों की इन्ही विशेशताओं को ध्यान में रखते हुए राश्ट्रीय जैविक खेती केंद्र, गाजियाबाद–उ.प्र. ने 2015 में वेस्ट डीकम्पोजर या कचरा/अपशिश्ट अपघटक नामक एक उत्पाद तैयार किया है जिसका उपयोग अपशिश्ट कचरे से त्वरित खाद के निर्माण में किया जाता है, यह मृदा स्वास्थ्य सुधार के साथ–साथ पौध संरक्षण का कार्य भी करता है।

➢ वेस्ट डीकम्पोजर क्या है

वेस्ट डीकम्पोजर देशी गाय के गोबर से निकला सूक्ष्म जीवों का संघ है जिसमें सभी प्रकार के कार्बनिक पदार्थों के अपघटक सूक्ष्म जीव सम्मिलित होते है, इसकी 30 ग्राम की बोतल होती है व कीमत 20/–रू प्रति बोतल है जिसे राश्ट्रीय जैविक खेती केंद्र से सीधे या किसी क्षेत्रीय जैविक खेती केंद्र से आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। डीकम्पोजर को भारतीय कृशि अनुसंधान परिशद्, नई दिल्ली द्वारा भी मान्य किया गया है। यह उत्पाद देशी गाय के गोबर से बनाया जाता है। इसमें सूक्ष्म जीवाणु हैं, जो फसल अवशेश, गोबर, जैव कचरे को खाते हैं और तेजी से बढ़ोत्तरी करते हैं जिससे जहां ये डाले जाते हैं वहां कुछ ही दिनों में गोबर और कचरे को सड़ाकर खाद बना देते हैं। अपघटक को जब जमीन मे डालते हैं तो यह मिटटी मे मौजूद हानिकारक, बीमारी फैलाने वाले कीटाणुओं की संख्या को नियंत्रित करता हैं।

➢ वेस्ट डीकम्पोजर की विशेषताएं

- हर मौसम में प्रत्येक फसल हेतु उपयोगी
- लम्बी जीवन अवधि 3 वर्ष
- बहुत सस्ता
- बनाने में सरल
- अति विश्वसनीय
- सभी फसलों हेतु बहुत प्रभावी

➢ डीकम्पोजर संवर्धन घोल कैसे तैयार करें

डीकम्पोजर घोल बनाने की विधि बहुत सरल है जिसको किसान अपने खेत पर आसानी से तैयार कर सकता है जो की बहुत कम लागत में तैयार हो जाता है बनाने की विधि निम्न प्रकार से है–

डीकम्पोजर घोल तैयार करने के लिए सबसे पहले हम 2 किलो गुड. लेकर 200 लीटर क्षमता वाले प्लास्टिक के ड्रम में पानी के साथ अच्छी तरह मिलाते हैं तथा मिलाने के बाद पूरा पानी से भर देते हैं, ध्यान रखने वाली बात यह है की इसे छायादार स्थान पर ही रखते हैं।

वेस्ट डीकम्पोजर की 1 बोतल लें जो की 30 ग्राम की होती है, उसको हम पानी में जिसमें गुड़ मिला हुआ रहता है, में अच्छी तरह मिलाते है। प्लास्टिक ड्रम में डीकम्पोजर डालते हुए यह सुनिश्चित कर लें की बोतल की सारी सामग्री इस गुड़ मिले हुए पानी में मिल जाये।

प्लास्टिक ड्रम में वेस्ट डीकम्पोजर के समान वितरण के लिए लकड़ी की छड़ी से अच्छी तरह से हिलाते हैं जिससे ये पानी में मिल जाये।

इस प्लास्टिक ड्रम को एक गत्ते या मोटे कागज से ढक देते हैं और इसे हर दिन एक या दो बार हिलाते हैं जिससे यह अच्छी तरह से तैयार हो सके, 5 दिनों के बाद यह वेस्ट डीकम्पोजर का घोल उपयोग के लिए तैयार हो जाता है।

सह–प्राध्यापक/वि.व.वि. (मृदा विज्ञान), सह–प्राध्यापक/वि.व.वि. (फसल सुरक्षा) एवं प्रभारी अधिकारी
कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटवा, आजमगढ़– 276207
ई–मेलः randhirnayak05@gmail.com, rudrapsingh.doe@gmail.com

उपरोक्त घोल से किसान बार–बार वेस्ट डीकम्पोजर घोल तैयार कर सकते हैं, इसके लिए 20 लीटर वेस्ट डीकम्पोजर घोल में 2 किलोग्राम गुड़ मिलाते हैं और 180 लीटर पानी मिलाया जाता है, इस प्रकार किसान 3 वर्शों तक इस वेस्ट डीकम्पोजर से लगातार घोल को तैयार कर उपयोग में ले सकते हैं।

➢ वेस्ट डीकम्पोजर खेत में कैसे उपयोग करें

किसान वेस्ट डीकम्पोजर घोल का 200 लीटर प्रति एकड़ के दर से सिंचाई जल के साथ उपयोग कर सकते है या इसे बीजोपचार व पर्णीय छिडकाव द्वारा भी उपयोग मे लेकर किसान अधिक लाभ कमा सकते हैं, वेस्ट डीकम्पोजर का उपयोग त्वरित कम्पोस्ट खाद बनाने में भी किया जा सकता है।

➢ कम्पोस्ट खाद बनाने में

वेस्ट डीकम्पोजर का उपयोग कम्पोस्ट खाद बनाने मे किया जाता है जिसकी विधि निम्न प्रकार है।

सबसे पहले छाया में एक प्लास्टिक की चादर बिछाते हैं तथा उस पर 1 टन फसल अपशिश्ट फैला देते है, अब इन फसल अपशिश्ट पर पानी का छिडकाव करते हैं और तैयार वेस्ट डीकम्पोजर घोल की 20 लीटर मात्रा का छिड़काव करते हैं।

इस परत के ऊपर फसल अपशिश्ट की एक और परत फैलाते हैं फिर से इस खाद की परत के ऊपर 20 लीटर वेस्ट डीकम्पोजर घोल का अच्छी तरह छिड़काव करते हैं, इस प्रकार तैयार 200 लीटर वेस्ट डीकम्पोजर को अपशिश्टों की 10 परतों के लिए काम में लेते हैं, खाद बनाने की इस पूरी प्रक्रिया के दौरान व जब तक खाद बन ना जाये इसमें 60 प्रतिशत नमी बनाए रखते हैं तथा इसे प्रत्येक 15 दिनों के अन्तराल पर पलटते रहते हैं व 60–65 दिनों में खाद उपयोग के लिए तैयार हो जाती है।

➢ पर्णीय छिड़काव के रूप में

वेस्ट डीकम्पोजर के तैयार घोल को फसलों में पर्णीय छिड़काव (1:4, 1 लीटर डीकम्पोजर तथा 4 लीटर पानी) के रूप में भी काम ले सकते हैं, इस घोल को 10 दिन के अन्तराल पर एक फसल में 4 छिड़काव कर सकते हैं जो कई प्रकार की बीमारियों से पौधों की सुरक्षा करता है।

➢ सिंचाई जल के साथ

सिंचाई जल के साथ मिलाकर भी दिया जाता है। बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति में 200 लीटर घोल प्रति एकड़ प्रयोग में लाया जाता है।

➢ फसल अव ोश की स्थानीय कम्पोस्टिंग

फसल की कटाई के बाद खेत में बचे डंठल व अन्य अवशेशों पर इस घोल का छिड़काव कर सकते हैं जिससे वे जल्दी सड़ जाते हैं।

➢ बीज उपचार में

इस घोल द्वारा बीजोपचार कर फसलों को कई प्रकार की बीज जनित बीमारियों से बचाया जा सकता है जिसकी विधि निम्न प्रकार है।

सबसे पहले अपने हाथों में दस्ताने पहनें क्योंकि यह सूक्ष्म जीवों का घोल है, हाथों में बदबू पैदा कर सकता है व हानिकारक भी हो सकता है। अब 1 बोतल की सामग्री को अच्छी तरह से 30 ग्राम गुड़ व 1 लीटर पानी के साथ अच्छी तरह मिला लेते हैं इस तैयार घोल से लगभग 20 किलो बीज का उपचार किया जा सकता है।

उपचारित बीज को आधे घंटे के लिए छाया में सुखा देते हैं इस प्रकार तैयार बीज को बुवाई के लिए काम में लेते हैं।

➢ वेस्ट डीकम्पोजर के लाभ

आज के दौर में जहां जैविक कृशि का क्षेत्रफल बढ़ा है और इसमें जीवांश्मो को सड़ाने गलाने में समस्याएं होती हैं वहां पर यह बहुत कारगार साबित हुआ है इसके अलावा वेस्ट डीकम्पोजर उपयोग करने के कई फायदे हैं उनमें से कुछ का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है–

वेस्ट डीकम्पोजर से बीजोपचार करके 98 प्रतिशत जल्दी और समान अंकुरण होता है और उगने से पहले रोग व बीमारियों से भी बीजों को सुरक्षा प्रदान करता है। वेस्ट डीकम्पोजर घोल का सिंचाई जल के साथ उपयोग करने से सिर्फ 21 दिन के भीतर ही सभी प्रकार की अम्लीय और क्षारीय मिट्टी के जैविक और भौतिक गुणों को परिवर्तित कर सुधार हो जाता है यह सिर्फ छह महीने में ही एक एकड़ भूमि में 4 लाख तक केंचुओं की आबादी उत्पन्न करने में मदद करता है।

यह 60–65 दिनों में कृशि अपशिश्ट, पशु अपशिश्ट, रसोई अपशिश्ट, शहर के अपशिश्ट जैसे सभी जैव अपघटन योग्य सामाग्री को अपघटित कर अच्छी खाद का निर्माण कर देता है, परम्परागत विधियों से तुलना करे तो यह खाद बनाने की अब तक की सबसे तीव्र विधि है जो जैविक खेती को बढ़ावा देने हेतु सबसे महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

वेस्ट डीकम्पोजर को पर्णीय छिड़काव के रूप में भी उपयोग लिया जा सकता है जो विभिन्न फसलों में विभिन्न प्रकार की जीवाणु, फफूंद और विशाणु जनित बीमारियों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करता है ।

किसान रासायनिक खाद और कीटनाशकों का उपयोग किए बिना वेस्ट डीकम्पोजर के उपयोग से जैविक खेती कर सकते हैं। यदि किसान खेत में वेस्ट डीकम्पोजर का उपयोग करता हैं तो उर्वरकों द्वारा नाइट्रोजन, फास्फोरस या पोटाश देने की कोई आवश्यकता नहीं होती है।

वेस्ट डीकम्पोजर के उपयोग से सभी प्रकार के रसायनों, कवकनाशी और कीटनाशकों के 90 प्रतिशत उपयोग को कम करता है क्योकि यह दोनों जड़ जनित बीमारियों और शाखाओं के रोगों को नियंत्रित करता है।

इस प्रकार हम यह निश्कर्श निकाल सकते हैं कि वेस्ट डीकंपोजर एक जैविक हथियार है जो फसलों की कीट व बीमारियों से सुरक्षा करेगा तथा हर प्रकार से पोशण प्रदान करेगा, इससे किसानों का रसायनों पर होने वाला खर्च कम होगा व आमदनी बढ़ेगी और साथ ही उत्पाद की गुणवत्ता में भी सुधार आएगा।

➢ मात्र 21 दिन में क्षारीय मिट्टी को सुधारता है वेस्ट डीकम्पोजर

कृशि के क्षेत्र में देश बहुत आगे बढ़ रहा है, हर रोज नये नये डेवलपमेंट हो रहे है, परन्तु खेती तो मृदा में ही होती है, देश के किसानों ने अंधाधुंध कीटनाशकों और उर्वरकों का इस्तेमाल करके खेत की मिट्टी को खराब कर दिया है, जिसकी वजह से फसल के

उत्पादन में कमी भी आयी है। यदि खेत की मिट्टी स्वस्थ होगी तो ही पैदावार अच्छी होगी, किसान आजकल क्षारीय और अम्लीय मृदा की समस्या से जूझ रहे हैं ऐसे किसानों के लिए वेस्ट डीकम्पोजर किसी वरदान से कम नहीं है इस उत्पाद के इस्तेमाल से किसान अब क्षारीय और अम्लता से प्रभावित हुए बिना बेहतर उपाय प्राप्त कर सकेंगे, वह भी एक माह से कम समय के भीतर इसमें बहुत ही आसानी से सुधार किया जा सकता है। राश्ट्रीय जैविक केन्द्र, गाजियाबाद के वैज्ञानिकों द्वारा तैयार वेस्ट डीकम्पोजर किसानों के लिए एक वरदान साबित हो रहा है। इसका उपयोग करके किसान 21 दिन के भीतर क्षारीय और अम्लीय मृदा में सुधार देख सकेंगे। वेस्ट डीकम्पोजर का उपयोग 1000 लीटर प्रति एकड. की दर से किया जाता है, जिससे सभी प्रकार की क्षारीय व अम्लीय मिट्टी के रासायनिक और भौतिक गुणों में इस प्रकार के अनुप्रयोग के 21 दिन के भीतर सुधार आने लगता है। इससे 6 माह के भीतर एक एकड़ भूमि में 4 लाख से अधिक केंचुए पैदा हो जाते हैं। केंद्र ने इस तरह वेस्ट डीकम्पोजर की 30 मिलीलीटर शीशी की कीमत 20 रु रखी है, घरेलू कचरे से बेहतर जैविक खाद भी तैयार कर सकते हैं। इस तरह की तकनीकी को प्राइवेट कम्पनी को बेच दिया जाता था जिससे की किसानों तक वह तकनीकी सही से नहीं पहुँचती थी इसलिए सरकार ने स्वतः ही वेस्ट डीकम्पोजर को प्रमोट करने का लक्ष्य रखा था ताकि किसानों को इसका फायदा मिल सके।

- **वेस्ट डीकम्पोजर यहॉ से खरीदे**

उत्तर प्रदेश ,उत्तराखण्ड, दिल्ली एवं राजस्थान में सहायक निदेशक, क्षेत्रीय जैविक खेती केन्द्र सेक्टर 19, कमला नेहरु नगर, हापुड. रोड, गाजियाबाद उ.प्र. पिन– 201002

फोन नं.– 0120–2764906

जगपत सिंह– 09990068268 – रिटेलर गाजियाबाद

जनपद स्तर पर वेस्ट डीकम्पोजर प्राप्त करने हेतु सम्पर्क सूत्र–

- राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र, गाजियाबाद ने इसके कम्पनी से विक्रय हेतु समझौता किया है। जिसके तहत ब्लाक स्तर पर जहां–2 भी इसके एजेंसियां है वहाँ से वेस्ट डीकम्पोजर प्राप्त किया जा सकता है।
- जनपदों के कृशि विभाग ने इण्टरमीडिएट या बी.एस.सी. कृशि के बेरोजगार नवयुवकों को रोजगार देने के उद्देश्य से हर विकास खण्ड में दो–दो वन स्टाप कम एग्रीजंक्शन नाम से दुकानें खुलवा रही हैं, इन दुकानो पर भी वेस्ट डीकम्पोजर विक्रय किया जा रहा है।

निष्कर्श–

वेस्ट डीकम्पोजर जैविक खेती कर रहे किसानों के लिए जैविक खाद का बेहतर विकल्प है, कम खर्च में किसान इसकी मदद से स्वयं खाद बना सकता है। परीक्षण परिणाम बताते हैं कि इसके उपयोग से बीज का एक समान अंकुरण होता है, इसके उपयोग के बाद किसान को फसल में रासायनिक कीटनाशक और उर्वरक देने की जरुरत नहीं रहती है। खास बात यह है कि जड़ और तना संबंधी बीमारियों के नियंत्रण में भी उपयोगी पाया गया है।

भोजपुरी कविता

पेड़वा लगइबऽ तऽ बरसी पानी

❑ **कृष्णानन्द राय**

अब पुरखा पुरनिया कऽ बात सभ मानी।
पेड़वा लगइबऽ तऽ बरसी पानी।।

इ कइसन विकास, बड़का पेड़वा कटाइल।
इ कइसन पढ़ाई ज्ञान कहंवा पराइल।।

पेड़ बिना कइसे जिहन दुनिया कऽ परानी।
पेड़वा लगइब तऽ बरसी पानी।।

पेड़ जहाँ बाटे ओजहा आवेले बदरिया।
पेड़वा पर बदरी कऽ रहेला नजरिया।।

पेड़वे से सांस मिली, बचल रही जिन्दगानी।
पेड़वा लगइब तऽ बरसी पानी।।

पेड़ छाया फल देला जानेला जहनवा।
पेड़ से हरियाली बा, पेड़ धरती कऽ गहनवा।।

कृष्णानन्द तापमान बढ़ला से होला परेशानी।
पेड़वा लगइबऽ तऽ बरसी पानी।।

भोजपुरी कवि/गंगा सेवक
मो0– 9415861260, 6394000479

व्यवसायिक कृषि

Peer Reviewed

पपीते की बागवानी

❑ डॉ. आर.एस. सेंगर एवं श्री कृशानु

पपीता एक ही वर्ष में तैयार होने वाला उपयोगी तथा पौष्टिक गुणों से भरपूर फल है। इसमें अधिक क्षमता तथा बाजार की अधिक मांग होने के कारण हमारे देश में इसका उत्पादन तेजी से बढ रहा है वैसे तो पपीता गर्म जलवायु की खेती है, परन्तु कृषि क्रियाओं में परिवर्तन कर इसे अन्य क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है। भारत में मुख्यतः पपीता महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में व्यवसायिक रूप से उगाया जाता है।

भूमि तथा जलवायु

सामान्यतः पपीता पानी न रूकने वाली रेतीली दोमट तथा दोमट भूमि में उगाया जाता है। (पी0एच0) मान 7 से 8.5 तक उपयुक्त रहता है। अम्लीय भूमि व करीली भूमि, जिसमें पानी रूकता है। पपीता व्यवसायिक रूप से लगाने की सलाह नही दी जाती है। समुद्र सतह से 4000 फुट की ऊंचाई तक अथवा पहाड़ी घाटियों में इसकी खेती की जा सकती है। तापमान 5 डिग्री सेन्टीग्रेड़ से कम होने की तथा अधिक पाले की स्थिति में इसके फल खराब तथा नर्म होकर गिर सकते है तथा उनका विकास ठीक नही होता। अतः यह स्थान व्यवसायिक खेती के लिए उपयुक्त माने जाते है।

प्रजातियां

पपीता एक अत्यधिक क्रास पोलिनेटेड़ फसल होने के कारण इसमें शुद्ध प्रजातियां अधिक समय तक स्थिर नहीं रह पाती अतः विश्वसनीय केन्द्रों से ही बीज प्राप्त करना चाहिए।

पूसा की किस्में:

1. पूसा ड़ेलिसस

यह फलों की उपज और गुणों के हिसाब से उत्तर भारत की सबसे अच्छी किस्म है। यह गाईनोड़ायोसियस किस्म है। जो शत –प्रतिशत फल देता है। यह एक अच्छा स्वाद, सुगन्ध और गहरे नारंगी रंग का फल देने वाली किस्म है।

2. पूसा मैजेस्टी

इसके फल पकने के बाद अधिक दिनों तक ठहरते हैं। यह भी गाइनोड़ायोसियस और अधिक पपेन देने वाली किस्म है। यह सूत्रकृमि प्रतिरोधी किस्म का पपीता है।

3. पूसा जायन्ट

यह काफी बड़े आकार के फल देने वाली किस्म है। यह तेज हवा और आंधी को अच्छी तरह बर्दाश्त कर लेता है। अतः तेज आंधी वाले क्षेत्रों के लिए यह काफी अच्छी किस्म है।

4. पूसा ड़वार्फ

इस किस्म के पौधे बौने एवं फल का उत्पादन उधिक होता है। फल मध्यम आकार के अंड़ाकार होते है। उत्तर भारत में इसकी व्यवसायिक खेती की अच्छी सम्भावनायें है। पर इसमें आधे नर तथा आधे मादा पौधे आते है।

5. पूसा नन्हा

यह बौनी प्रजाति वाला पौधा है। जो गृह वाटिका और गमलों में लगाने तथा सघन बागवानी के लिए उत्तम होता है।

उत्तरांचल की किस्में

1. फार्म सेलेक्शन

चडढा सीड़ फार्म (नैनीताल, उत्तरांचल) द्वारा विकसित यह प्रजाति 80 से 100 किलो प्रति पौधे तक सर्वाधिक उपज देने की क्षमता देने वाली तथा बौनी जाति की है। इस प्रजाति के फल थोड़े लम्बे 2–4 किग्रा के होते है तथा फलत एक समान होती है। एक फूलड़ण्ड़ी पर एक ही फल आता है। जिसके कारण फलों की छंटाई की आवश्यकता नही होती।

- **कोयम्बटूर की किस्में :**

ता0 कृ0 वि0 वि0 कोयम्बटूर से निकली निम्नलिखित किस्में है।

1. सी0 ओ0 1

यह छोटे आकार का पौधा है। जिसमें पहला फल जमीन से करीब 6 सेमी0 की ऊंचाई पर लगता है।

2. सी0 ओ0 2

यह माध्यम आकार की लम्बी और अधिक पपेन देने वाली किस्म है।

3. सी0 ओ0 3

यह गाइनोड़ायोसियस प्रजाति का लम्बा विशाल पेड़ है। फल मध्यम आकार के बहुत मीठे और लाल रंग के होते है।

4. सी0 ओ0 4

यह गाइनोड़ायोसियस किस्म का लम्बा पेड़, फल का गूदा भी चित्तीदार बैंगनी और मोटा होता है। यह अपने फलों और सुन्दरता के कारण गृहवाटिका में लगाने के लिए उत्तम है।

कृषि जैव प्रौद्योगिक विभाग, स0व0प0 कृषि एवं प्रौ0 वि0वि0 मेरठ–250110
ई–मेल: sengarbiotech7@gmail.com

• **बंगलौर की किस्में :**

1. कुर्ग हनी

यह भारतीय बागवानी अनुसंधान केन्द्र, चेथाली स्टेशन से हनीड़यू किस्म से चयन द्वारा निकली गई है। यह गाईनोड़ायोसियस प्रजाति का पौधा है।

बीज की मात्रा एवं उपचार

सामान्यतः एक हेक्टेयर के लिए 500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है (200 ग्राम प्रति एकड़) बीज बोने से पहले एक लीटर पानी में 03 ग्राम बावस्टिन अथवा एमासान (पारायुक्त फफूंदीनाशक) का घोल बनाकर उससें 05 मिनट तक बीज को उपचारित करें।

बीज बुवाई का समय

भारत वर्ष के विभिन्न प्रान्तों में पपीते का बीज बोने का समय अलग–अलग होता है। सामान्यतः व्यवसायिक दृष्टि से उत्तरी भारत में जुलाई, मध्य भारत में अगस्त तथा गुजरात और महाराष्ट्र में फरवरी तक पपीते के बीज की बुआई करनी चाहिए। भावरी क्षेत्र में 10 जुलाई से 10 अगस्त का समय सर्वोत्तम है। बीज का जमाव भूमि का तापमान 30–35 डिग्री सेन्टीग्रेड़ तक होने पर ही होता है। अतः पोली हाऊस में जमाव अच्छा रहता है।

बीज बुवाई का तरीका

05 ′ 01 मीटर लम्बी चौड़ी तथा 06 इंच उठी क्यारियां बनाकर उसमें 15 किलो सड़ी गोबर की खाद 500 ग्राम एन0 पी0 के0 15:15:15 तथा 100 ग्राम फालीड़ाल या 40 ग्राम फ्युराड़ान (दानेदार) बुआई से 20 दिन पहले ड़ालकर मिला लें, बोने से पहले क्यारी को भुरभुरी बना लें। अब 2′11′2 इंच की दूरी पर बीज बोंयें। आधी सूखी हुई पत्तियों का चूरा और आधी मिट्टी मिलाकर एवं छानकर बीज के ऊपर की नाली को भर दें। बुआई करने के बाद क्यारी अखबार के कागज से अथवा सूखे फूस इत्यादि से ढक दें, और नियमित रूप से समय–समय पर फव्वारे से हल्का पानी देते रहें ताकि ऊपरी सतह पर हमेशा नमी बनी रहे। 15 से 20 दिन बाद जब बीज अंकुरित होने लगे तब फूस इत्यादि हटा दे और हजारे से पानी देते रहे। जब पौधों में 5–7 बाद दो–दो पत्ते आने लगें, उस समय नर्सरी के पौधों को पोलीथीन के थैलियों से प्रतिरोपित करना चाहिए।

नर्सरी में पौधों का उपचार

उमस तथा हवा में अधिक नमी होने के कारण पौध गलन का रोग आ सकता है। तेज बारिश के पश्चात् हवाबन्द होने पर गर्मी के कारण तना गलन तीव्रता से होता है। अतः पौधों के ऊपर 50 प्रतिशत एग्रो शेड़नेट अथवा बांस फूस का छप्पर रखना चाहिए। 0.1 प्रतिशत कापर आक्सीक्लोराइड़ अथवा कार्बनड़ाजिम का स्प्रे नर्सरी में दो बार उक्त परिस्थितियों में कर लेना चाहिए।

थैली भराव

4′6 की पोलीथीन की थैलियों में तली की तरफ चार छेद कर लें इन थैलियों में एक हिस्सा बलोई मिट्टी, एक हिस्सा गोबर की खाद तथा एक हिस्सा सुखे पत्तो का चूरा मिलाकर छानकर भरें। शाम का समय नर्सरी में पानी डालकर पौधों को सावधानी से उखाड़ कर इन थैलियों में प्रतिरोपित करें। नर्सरी थैलियां 3 से 5 दिन तक छाया में रखें तत्पश्चात् इन्हे खुली धूप में ही रखना चाहिए अन्यथा नर्सरी में पौधे पतले होने लगेंगे। ध्यान रहे कि रोज शाम को नियमित हजारे से पानी देते रहें। यदि थैली में पौधे प्रतिरोपित न करना चॉहे तो खुले में गोबर खाद मिली हुई क्यारियों में 15′15 सेमी की दूरी पर प्रतिरोपित किया जाना चाहिए और हल्का पानी देते रहना चाहिए। 25 से 30 दिन में जब पौधे 3 से 5 इंच के हो जाएं तो इन्हे खेत में रोपित कर दिया जाना चाहिए।

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी में सामान्यतः दो विधि अपनाई जाती है। प्रथम विधि में लाइन से लाइन 10 फीट की दूरी रखते हुए एक–एक मीटर दूरी पर सवा फिट लम्बे, सवा फिट गहरे गड़ढे बना लेते है। गड़ढे के मिश्रण के रूप में 8 से 10 किलो सड़ी गोबर की खाद 800 ग्राम नीम खली, 100 ग्राम एन0पी0के0 12:32:16 तथा 25 ग्राम फ्यूड़ारान गड़ढे से से निकाली गई मिटटी में अच्छी तरह मिलाकर भर देते है तथा पानी दे देते हैं। 4 से 5 दिन पश्चात् इस गड़ढे में पंक्ति का ध्यान रखते हुए पौधा रोपण कर देना चाहिए। खेत में लगाने से पहले थैली को सावधानी से फाड़ या उतार लेना चाहिए।

द्वितीय विधि :

व्यवसायिक रूप से बड़े खेतों में पपीता लगाने हेतु नाली विधि अपनायी जाती है। इसमें 10 फीट की दूरी पर समानान्तर नालियां खुदाई कर लेते हैं। नाली की गहराई सवा फीट तथा चौड़ाई भी सवा फीट रखी जाती है। नाली खुदाई का काम फावड़े से अथवा ट्रेक्टर के पीछे प्लाव या नाली खोदने वाला यंत्र लगाकर कर सकते हैं। इस नाली में आधा टन गोबर का खाद 10 किलो नीम खली तथा 5 किलो एन0पी0के0 के एवं आधा किलो फ्यूराड़ान मिलाकर सम्पूर्ण मिश्रण को नाली में पुनः भर देते है, और पानी लगा देते हैं। इस नाली में 4–5 दिन पश्चात् 3–3 फीट की दूरी पर सीधी लाइन में पौध रोपण कर देना चाहिए।

सिंचाई

पौध रोपण के पश्चात् 5 दिन तक केवल लोटे से पानी देना चाहिए तत्पश्चात बाद में हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। पौधों से 6 इंच की दूरी पर पानी की नाली बनाकर केवल नाली में पानी चला देने से पौधे को नमी प्राप्त हो जाती है जो अधिक उपयुक्त है। जाड़ों में 15 से 20 दिन के अन्तर पर तथा गर्मियों में 8 से 10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करते है।

पानी को सीधा तने के सम्पर्क में न आने दें (चारों ओर मिट्टी चढ़ाकर रखें) और उचित जल निकास का प्रबन्ध अवश्य करें। सिंचाई के बाद निराई–गुड़ाई करें इससें मिट्टी कड़ी नही हो पाती और खेत में हवा का संचार भी अच्छा बना रहता है।

पौध रोपण का समय

15 अगस्त से 15 अक्टूबर तक उत्तर भारत में तथा दिसम्बर–जनवरी तक दक्षिण भारत में पपीता लगाने का उचित समय है। उत्तरी भारत के लिए सितम्बर माह सर्वोत्तम है।

पाले से बचाव

पपीते के छोटे पौधों को पाले से बचाने के लिए पेड़ के चारों ओर दो–दो फीट की 3 लकडिया (कुरी, अरहर, बांस की पतली ड़ण्ड़ियां) गाड़ कर पराल के मुठ्ठे से ऊपर बांधते हुए रख देना चाहिए। ध्यान रहे कि चारों ओर बहुत अधिक पराल न लगायें अन्यथा धूप न मिलने की अवस्था में भी पौधा मर सकता है।

पौधों की देखरेख एवं नर पौधों की छंटाई

सर्दियों में दो तीन बार तथा गर्मियों में तीन चार बार पानी देना पर्याप्त होता है। समय–समय पर गुड़ाई करते रहें। अप्रैल–मई में पौधों में फूल आने लगते है।

मादा पेड़ों के फूल मोटे तथा तने के साथ चिपके होते है परन्तु नर पेड़ों के फूल छोटे और पतली लम्बी ड़ंड़ियों के साथ लटके हुए होते है। 5 प्रतिशत नर पेड़ों को छोड़ते हुए जो कि परागण के लिए आवश्यक होते हैं, शेष नर पेड़ों को खेत से निकाल देना चाहिए। कुछ पौधे उभयलिंगी होते हैं अर्थात 1–2 इंच लम्बी ड़ंड़ी बनाते हुए फल बनाने लगते हैं। इन पौधों में लम्बे आकार के उत्तम फल आते हैं। अतः इन्हे उखाड़ना नही चाहिए।

मिटटी चढ़ाना

बरसात से पहले पेड़ के चारों ओर 6 से 8 इंच ऊंची मिट्टी तने के चारों ओर खेत के बीच से लेकर चढ़ा देनी चाहिए। इससे बरसात में पानी सीधा तने के संपर्क में नहीं रहेगा जिससे तना गलन रोग से बचा जा सकता है। मिट्टी चढ़ाने के कारण तेज हवा में भी पौधे नही गिरते हैं।

फलो की तुड़ाई एवं पैकिंग

पौध रोमण के 1 वर्ष पश्चात् फल पकने लगते हैं। नीचे से पकने प्रारम्भ होते हैं। जब फल रंग बदलने लगे और हल्की पीली धारी दिखाई दे अथवा नाखुन लगाने पर गाढ़े दूध के स्थान पर पानी जैसा द्रव्य निकलने लगे तो यह फल तुड़ाई लायक माना जाता है फल को तोड़कर रददी कागज में लपेटकर टोकरों में पैक कर बाजार भेजना चाहिए। इससे फल भी खराब नही होते तथा फल के चारों ओर रंग भी अच्छा आता है।

पैदावार तथा लाभ

पपीते की पैदावार सामान्यतः 30 से 40 टन प्रति हैक्टेअर होती है परन्तु अच्छी खेती करने पर 60 टन प्रति हैक्टेअर तक ली जा सकती है। इस प्रकार यदि बाजार भाव 2 रूपया प्रति किलो भी मिले तो 80000/– रूपये प्रति हैक्टेअर की बिक्री तथा 60000/– प्रति हैक्टेअर का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

पपीते के साथ मिश्रित खेती

पपीत के साथ छोटी अवस्था में विभिन्न फसलें जैसे मटर, फ्रेंचबीन ग्लोड़लाई, प्याज, मसूर, लहसून इत्यादि लगा सकते हैं तथा इन फसलों के पश्चात ऐसी फसलें लगाई जा सकती है जो कि पपीते की हल्की छाया में भी अच्छी हो जाती है। जैसे अदरक, हल्दी, मिर्च(पन्त सी वन), जिमी कन्द, अरबी इत्यादि ध्यान देना चाहिए कि अन्तः फसलों हेतु अतिरिक्त खाद अवश्य दें।

रोग एव कीट तथा उनका नियंत्रण :

1. विषाणु

विषाणुओं मे मोजैक, लीफकर्ल और ड़िस्टोर्सन रिंग स्पाट पपीते के पौधे को अधिक हानि पहुंचाते हैं। बीमार पौधों की पत्तियां पीली–हरी, चितकबरी और भूरी हो जाती हैं। कुछ पौधों में मौजेक बहुत तीव्रता से दिखाई देता है और पत्तियां सूई के आकार की हो जाती है। ऐसे पौधों को खेत से उखाड़ कर मिटटी में गाड़ देना चाहिए ताकि छोटे कीट इत्यादि मौजेक को पूरे बाग में न फैला पाए। इन छोटे कीटों (एफिड, जैसिड) को मारने के लिए एन्ड़ोसल्फान, मोनोक्रोटोफास का स्प्रे करना चाहिए। द्वितीय वर्ष में मौजेक पौधों में स्वतः कम हो जाता है।

2. जड़ और तना सड़न रोग

इसके आक्रमण से पौधे के जड़ एवं तने का सड़ना शुरू हो जाता है और अन्ततः पूरा पौधा सड़कर गिर जाता है। पपीते के बाग में जल निकास का विशेष ध्यान देना चाहिए। तने पर जैसे ही इस बीमारी के लक्षण दिखाई पड़े, उस स्थान से सड़े भाग को खुरचकर साफ कर लेना चाहिए। जहां सड़न की बीमारी अधिक लगती है। वहां पर 5 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड़ 1 लीटर पानी में घोल कर तने के चारों तरफ मिलाकर ड़ालें ताकि दवा तने के साथ–साथ जड़ों में भी पहुंचे। इससे यह उपचार बरसात में 2 से 3 बार करने से गलन के रोग से बचा जा सकता है।

3. ऐन्थेक्नोज

प्रभावित फल पर पीले रंग का धब्बा पड़ जाता है, जो धीरे–धीरे मुलायम होता जाता है और अन्त में भूरे रंग का हो जाता है। तने और शाखाओं में भी, जो भाग अधिक धूप में पड़ते हैं, यह बीमारी लग जाती है। मैंकोजेब या जिनेब का पानी में 0.25 प्रतिशत घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करने से इस बीमारी की रोकथाम की जा सकती है।

4. कली और पुष्पवृत्त का सड़ना

पौधों में यह बीमारी लगने से फूल और फल गिरने लगते हैं। 0.2 से 0.25 मैंकोजेब और जिनेब का छिड़काव शुरू में करना बीमारी को रोकने में सहायता करता है।

5. कीड़े

पपीते को कीड़ों से बहुत कम नुकसान पहुंचता है। फिर भी इनमें कुछ कीड़े लगते हैं। जिनका विवरण नीचे दिया जा रहा है :–

अ. रेड़ स्पाइड़र माइट

यह पपीते की पत्ती और फल पर आक्रमण करता हैं। जिसके कारण नई पत्तियां चिथड़ी नजर आती हैं। इसे घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत के छिड़काव से रोका जा सकता हैं।

ब. निमैटोड़

रेनीफार्म निमैटोड़ अधिक हानि पहुंचाता है। जिसके कारण पौधा छोटा हो जाता है और उसमें फल कम लगते है। इथिलीन ड़ाईब्रोमाइड़ 3 ग्राम/हेक्टेयर देने से इस बीमारी की रोकथाम की जा सकती है।

पपेन निकलना

कच्चे फलों के दूधिया तरल पदार्थ में पपेन होता है। जिसका उपयोग दवाइयों और व्यापार में किया जाता है। पपीते से पपेन निकलना बहुत आसान है। फल लगने के करीब 2.5 से 3 महीने बाद जब ये मध्यम आकार के हो जाते हैं। पपेन निकाला जाता है। जो बरसात से शुरू होकर मार्च तक चलता है। ठण्ड़े एवं नम वातावरण में पपेन अधिक मात्रा में निकलता है। फलों में सुबह से दोपहर तक सबसे अधिक मात्रा में निकलता है। किसी भी तेज ब्लेड़, चाकू या शीशे के टुकड़े से फल की सतह पर उसके ड़ंठल से लेकर किनारे तक चार गहरे लम्बे निशान बनाते हैं। इसकी गहराई 0.3 सेमी0 से ज्यादा नही होनी चाहिए। इसके लिए ब्लेड़ जो 0.3 सेमी0 ही दस्ते से बाहर हो, सर्वोत्तम हैं। पौधे के नीचे चारों ओर क्षेत्रनुमा पोलीथीन

बिछा देते हैं। इसी में दूध टपक–टपक कर गिरने लगता हैं। आधे घण्टे में पूरा दूध निकल जाता हैं। इसे स्टील के चम्मच से स्टील के बर्तन में इकट्ठा कर लेते हैं। अधिकतम पपेन के लिए यह प्रक्रिया प्रत्येक सात–आठ दिनों के अन्तराल पर तीन–चार बार करनी चाहिए। पपेन निकालते समय हाथ में दस्ताना जरूर पहन लेने चाहिए ताकि हाथों को नुकसान न पहुंचे। प्रशिक्षित आदमी एक दिन में करीब 2 किलो पपेन निकाल लेता है।

पपेन को रखने के लिए एल्यूमिनियम का गिलाव व बड़े आकार का टब सर्वोत्तम होता है। कटे स्थान पर जम गये तरल पदार्थ को भी खुरच कर रख लेना चाहिए। इसे तुरन्त ही धूप में या बिजली के चूल्हे पर 40 ड़िग्री सेन्टीग्रेड़ तापक्रम पर सुखाया जाना चाहिए। इसे कृत्रिम रूप से घर में बनें ईट की भट्ठी में भी सुखाया जा सकता है। यह भट्ठी करीब 1 मीटर चौड़ी, 1 मीटर ऊंची और 2 मीटर लम्बी होती है, जो तली की तरफ से बन्द और एक तरफ से खुली होती है। ऊपरी सतह भी खुली रहती है। ऊपरी सतह से करीब 30 सेमी0 नीचे एक लोहे की चादर रख देते हैं। इसके ऊपर 2.5 से 5 सेमी0 मोटी बालू की तह बिछा देते है। ताकि ताप सभी दिशाओं में बराबर फैल सके। पपेन को सबसे पहले बोरे के ऊपर फैलाकर तब उसे भट्ठी पर रख देते है। धुआं लगने से पपेन खराब हो जाता है। अतः जलावन के रूप में नारियल के छिलके या कोयले को ही इस्तेमाल करते हैं और ताप को 40 ड़िग्री सेन्टीग्रेड़ के नीचे ही नियंत्रित करके रखते है।

सूखने पर यह परतदार या रवादर हो जाता है। जिसे पीसकर पावड़र बना लेते है। सूखने के पहले 0.05 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाई–सल्फाइट परिरक्षक के रूप में ड़ालते हैं। अन्त में इस पावड़र पपेन को वायुरूद्ध बोतल या पोलीथीन बैग में पैक कर लेते हैं। भारत में पपेन की बिक्री हेतु फार्मास्युटिकल एण्ड़ कास्मेटिक प्रमोशन कौंसिल, मुम्बई और एन्जोकेम प्रयोगशाला प्राइवेट लिमिटेड़, येवला, जिला नासिक से संपर्क किया जा सकता हैं। पपेन आयात करने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, इंग्लैण्ड़, स्विट्जरलैण्ड़ और जापान आदि प्रमुख हैं। भारत में पपेन निर्यात की अच्छी सम्भावनायें हैं। अतः पपेन उद्योग को विकसित करने के लिए चुने हुए क्षेत्रों में पपीते के बाग लगााकर पपेन, पैंक्टिन और संरक्षित पदार्थ तैयार करने वाली फैक्ट्री लगाकर तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश करके इसकी सम्भावनाओं को और आगे तेजी से बढ़ाया जा सकता हैं।

पपेन सामान्यतः मध्य भारत गुजरात कर्नाटक, महाराष्ट्र इत्यादि ऐसे प्रदेशों में अधिक मात्रा में निकाला जाता हैं। जहां जाड़ो का तापमान 15 ड़िग्री सेन्टीग्रेड़ से कम नही होता है। उत्तरी भारत में पपेन निकालना अधिक लाभप्रद नहीं होता क्योंकि एक तो पपेन कम निकलता है, दूसरा फलों पर निशान लग जाने के कारण इसका बाजार मूल्य कम हो जाता हैं।

पपेन की पैदावार :

पपेन का उत्पादन जलवायु, किस्म तथा कृषि कार्य के अनुसार घटता–बढ़ता हैं। एक फल में 3 से 10 ग्राम तक सूखा पपेन प्राप्त होता है। प्रति पौधा पपेन की पैदावार 200–450 ग्राम तक पाई गई है। इस प्रकार एक पेड़ जिसमें 40–50 फल लगा हो तथा एक हेक्टेअर में पेड़ो की संख्या 2500 हो। 5 कुन्तल पपेन का उत्पादन होता है। पपेन की कीमत 200 रूपये प्रति किलोग्राम से लेकर 300 रूपये प्रति किलोग्राम तक है। इस प्रकार पपेन से 35000/– रूपये प्रति हेक्टेअर की आमदनी हो सकती है। देश के कई राज्यों खासकर महाराष्ट्र, गुजरात और मध्य प्रदेश में पपीते की खेती मुख्यतः पपेन पैदा करने के लिए ही की जाती है।

बीज उत्पादन :

पपीते की व्यवसायिक खेती में शुद्ध बीज की अनुपलब्धता प्रमुख बाधा है। बीजों की अनुवांशिक शुद्धता को बनाये रखना बहुत जरूरी है। शुद्ध बीज या तो नियंत्रित अवस्था में या दो किस्मों के बीच एक खास दूरी (2कि0मी0) रखने पर प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा नही करने पर बीजों की अनुवांशिक शुद्धता नष्ट हो जाती है।

नयंत्रित परागण की अवस्था में एक ही पृथक लिंगी किस्म के नर और मादा के बीच सहोदर संगम (सिंपिग) परागण किया जाता है। गाईनोड़ायोसियस किस्म में मादा पौधों को उभयलिंगी पौधों के पराग से परागण करते हैं या उभयलिंगी पौधों में स्वयं परागण करते है। परागण के बाद उसमें पहचान के लिए निशान लगा देते है। फलों के पकने पर बीजों को अलग–अलग निकाल लिया जाता है। बीजों को छाया में ही सुखाया जाता है तथा 8 से 10 प्रतिशत की नमी पर पोलीथीन में पैक कर छाया में स्टोर करना चाहिए।

मासिक कृषि कार्यक्रम

पपीते की खेती एक बार बाग लगा देने पर प्रायः 2 फसल ली जाती है तथा कुल आयु पौने तीन साल की होती हैं। अक्टूबर में पौधे लगा देने पर कृषि कार्यक्रम निम्नलिखित होगा :

पपीते के बाग में वर्षभर किये जाने वाले कार्यक्रमों का मासिक कैलेन्ड़र

प्रथम (रोपण) वर्ष

महीना एवं पखवाड़ा	कार्य
सितम्बर–अक्टूबर	खेत में पौधा लगाना तथा हल्की सिंचाई करना
नवम्बर	सूखे पौधों की जगह नया पौधा लगाना तथा आवष्यकतानुसार पानी देना। पेड़ के चारों तरफ निराई करना।
दिसम्बर	पेड़ के चारों तरफ निराई करना तथा बीच के जगहों में फावड़ें द्वारा गुड़ाई करना।
जनवरी	आवष्यमतानुसार पेड़ के चारों तरफ निराई करना।
फरवरी	बीच की जगहों मे फावड़े द्वारा गुड़ाई करना।
मार्च	खेत में नाली बनाकर पेड़ों में पानी देना।
अप्रैल	आवष्यकतानुसार पानी देना।
मई	लिंग भेद स्पष्ट होने पर नर पौधों को निकालना तथा आवष्यकतानुसार सिंचाई करना।
जून	अतिरिक्त नर पौधों को निकालना तथा पूरे खेत की फावड़े द्वारा गुड़ाई करना।
जुलाई	पेड़ के चारों तरफ 30 सेमी0 की गोलाई में मिट्टी चढ़ाना तथा प्रत्येक गड्ढ़े पर केवल एक पौधा रहने देना। रासायनिक खाद की प्रथम मात्रा नर पौधों को छोड़कर सभी मादा पौधों मे देना। पूरे बाग में निराई करना।
अगस्त	जल निकास की पूरी सावधानी बरतना, पूरे बाग में अगर घास हो तो निराई करना।
सितम्बर	रासायनिक खाद की आधी बची मात्रा प्रत्येक पेड़ से 30 सेमी0 की दूरी पर गोलाई में देना।

द्वितीय वर्ष

महीना एवं पखवाड़ा	कार्य
अक्टूबर	जमीन सूखने पर भरपूर सिंचाई करना, पीले फल तोड़ना।
नवम्बर	पीले फल पकने के पूर्व तोड़ना, आवष्यकतानुसार सिंचाई करना।
दिसम्बर	पीले फल तोड़ना, आवष्यकतानुसार सिंचाई करना।
जनवरी	पीले फल तोड़ना, आवष्यकतानुसार सिंचाई करना।
फरवरी	धूप से बचाने के लिए पेड़ में लगे फल को बोरे से ढ़कना, पीले फलों को तोड़ना तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई करना।
मार्च	फल अधिक मात्रा में पकने लगा हो तो शीघ्र से शीघ्र फल तोड़ना, आवष्यकतानुसार सिंचाई एवं निराई करना।
अप्रैल	फल अधिक मात्रा में पकने लगा हो तो शीघ्र से शीघ्र फल तोड़ना एवं बाग में आखिरी सिंचाई करना।
मई	सम्पूर्ण रूप से फल तोड़ना क्योंकि सभी फल पक कर समाप्त हो जाएंगें।
जून	पूरे बाग की सम्पूर्ण सफाई करना तथा बीच में फावड़े द्वारा गुड़ाई करना, पुराने फल समाप्त हो गये होंगे तथा नया फूल षुरू हो गया होगा। यदि वर्षा न हो तो सिंचाई करना।
जुलाई	रासायनिक खाद पुनः देना।
अगस्त	बाग में घास उगने पर निराई करना, झुके पेड़ को सीधा करना।
सितम्बर	रासायनिक खाद की आधी बची मात्रा पुनः देना। फल पकने षुरू हो गयें हों तो उन्हें शीघ्र तोड़ना।

वशेष सावधानियां :–

1. पानी रूकने वाली एवं चिकनी मिट्टी में पपीता न लगाएं।
2. दीवार के साथ पपीता न लगाए कम से कम 5 फीट की दूरी रखें।
3. अधिक पाला पड़ने की स्थिति में खेत में सिंचाई कर दे एवं भीगी पराल सुलगाकर खेत के चारों ओर धुंआ करें।
4. गोबर खाद की मात्रा कम न करें।
5. उत्तरांचल के भावरी इलाकों में 15 जुलाई से 10 अगस्त तक बीज बुआई कर दे तथा सितम्बर माह में खेत में पौधे लगा दें।

व्यवसायिक कृषि

Peer Reviewed

एवोकैडोः उपयोग और लाभ

❑ अमजद अन्सारी

एवोकैडो, जिसे वैज्ञानिक रूप से पर्सिया अमेरिकाना के नाम से जाना जाता है, एक विशिष्ट और बहुमुखी फल है जो दुनिया भर में तेजी से लोकप्रियता हासिल कर रहा है। एवोकैडो, जिसकी उत्पत्ति दक्षिण मध्य मेक्सिको में हुई थी, अपने समृद्ध, मक्खनयुक्त स्वाद और उत्कृष्ट स्वास्थ्य लाभों के कारण विभिन्न प्रकार के व्यंजनों में एक लोकप्रिय घटक बन गया है। एफएओ (2013) के अनुसार, मेक्सिको दुनिया के 25ः एवोकाडो का उत्पादन करता है, जो इसे दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक बनाता है, इसके बाद चिली 8.5ः के साथ आता है। इस फल को केंद्र में एक बड़े बीज के साथ एक बड़े बेरी के रूप में वर्गीकृत किया गया है और यह लॉरेसी परिवार का सदस्य है। एवोकैडो के पेड़ में फल की पैदावार बहुत अधिक होती है, रोपण के 7 साल बाद इसका उत्पादन 138 किलोग्राम तक पहुंच जाता है। इसे चट्टानी क्षेत्रों में लगाया जा सकता है और यह उन वार्षिक पौधों से प्रतिस्पर्धा नहीं करता है जो समतल भूभाग के लिए अनुकूलित होते हैं क्योंकि यह एक बारहमासी पौधा है। एवोकैडो का पेड़ एक सदाबहार पौधा है जो 65 फीट तक लंबा हो सकता है और इसमें चौड़े, चमकदार पत्ते होते हैं। यह गर्म उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में पनपता है, जिससे मेक्सिको जैसे देश, जो दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक है, एवोकाडो की खेती के लिए उपयुक्त है। पिछले कुछ वर्षों में एवोकैडो की खेती कैलिफोर्निया, फ्लोरिडा और दक्षिण अफ्रीका जैसी जगहों पर फैल गई है।

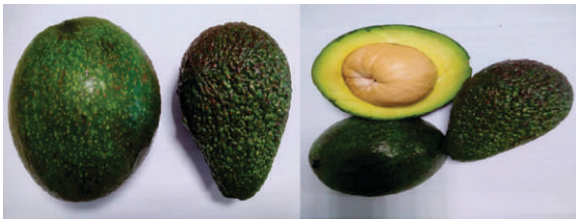

एवोकैडो फल (रीड और लैम्ब हैस)

एवोकैडो के गुणः

एवोकैडो की अनूठी, मलाईदार बनावट इसकी विशिष्ट विशेषताओं में से एक है। फलों का गूदा लाभकारी वसा से भरपूर होता है, जो इसे विभिन्न अनुप्रयोगों में मक्खन या मेयोनेज़ का एक आदर्श विकल्प बनाता है। हास एवोकाडो अपने गहरे हरे, कंकड़ जैसी त्वचा और अखरोट जैसे स्वाद के साथ सबसे लोकप्रिय है। अन्य प्रकार, जैसे फ़्यूर्टे, बेकन और पिंकर्टन के अपने विशिष्ट गुण और स्वाद हैं। एवोकैडो एक पौष्टिक पावरहाउस होने के साथ–साथ एक स्वादिष्ट सामग्री भी है। यह फाइबर, पोटेशियम, स्वस्थ मोनोअनसैचुरेटेड वसा, विटामिन के, सी, ई और बी जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्वों से भरपूर है। ये पोषक तत्व विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं, जिनमें प्रतिरक्षा समारोह को बढ़ाना, अच्छी त्वचा को प्रोत्साहित करना, पाचन में वृद्धि और हृदय स्वास्थ्य में सुधार शामिल है।

एवोकैडो के उपयोगः

विभिन्न सांस्कृतिक व्यंजनों में उनकी उपस्थिति और रसोई में उनकी अनुकूलनशीलता के कारण एवोकैडो की लोकप्रियता बढ़ गई है। एवोकैडो टोस्ट एक ट्रेंडी और स्वास्थ्यप्रद नाश्ते का विकल्प है जिसके ऊपर अक्सर अतिरिक्त फल, सब्जियां या यहां तक कि पका हुआ अंडा डाला जाता है। गुआकामोल, मसले हुए एवोकैडो से बना एक पारंपरिक मैक्सिकन डिप, एक घरेलू पसंदीदा है जिसे अक्सर टॉर्टिला चिप्स के साथ या टैकोस और नाचोस के लिए टॉपिंग के रूप में परोसा जाता है। एवोकैडो को काटकर सलाद में मिलाया जा सकता है, मलाईदार बनावट के लिए स्मूदी में मैश किया जा सकता है, या पारंपरिक वसा के स्थान पर बेकिंग व्यंजन में उपयोग किया जा सकता है। एवोकैडो ने अपने पाक उपयोग के अलावा कॉस्मेटिक और त्वचा देखभाल उद्योगों में भी लोकप्रियता हासिल की है। एवोकैडो तेल फल से प्राप्त होता है और, इसकी मॉइस्चराइजिंग और पौष्टिक विशेषताओं के कारण, अक्सर मॉइस्चराइज़र, बाल उपचार और सीरम में उपयोग किया जाता है। तेल में उच्च मात्रा में एंटीऑक्सीडेंट होते हैं, जो त्वचा को मुक्त कणों से होने वाले नुकसान से बचाते हैं और एक युवा उपस्थिति को बढ़ावा देते हैं।

एवोकैडो की खपत बढ़ रही है, जिससे उत्पादन के पर्यावरणीय प्रभाव के बारे में चिंताएं बढ़ रही हैं। एवोकाडो के उत्पादन के लिए बड़ी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ क्षेत्रों में वनों की कटाई और पानी की कमी हो गई है। एवोकैडो वर्तमान में दुनिया भर में एक लोकप्रिय फल है, जो अपने उत्कृष्ट स्वाद और उच्च पोषण सामग्री के लिए सराहा जाता है। एवोकाडो स्वाद और स्वास्थ्य लाभों का एक अनूठा मिश्रण प्रदान करता है, चाहे इसे सलाद, सैंडविच, स्मूदी या त्वचा

एवोकैडो उत्पाद (तेल और साबुन)

व
ई–मेलः m

देखभाल उत्पादों में खाया जाए। हालाँकि, यह गारंटी देना महत्वपूर्ण है कि पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने और इस लोकप्रिय फल की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए एवोकैडो का उत्पादन स्थायी तरीके से किया जाता है। इसके अलावा, एवोकैडो उगाने वाले क्षेत्रों में टिकाऊ कृषि पद्धतियों को प्रोत्साहित करने और जल प्रबंधन को बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

एवोकैडो के फायदेः

केले को छोड़कर, एवोकाडो किसी भी अन्य फल की तुलना में चार गुना अधिक पौष्टिक होता है, और इसमें प्रोटीन (1–3ः), बड़ी मात्रा में वसा में घुलनशील विटामिन, फोलिक एसिड, कैल्शियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम, नमक, फास्फोरस, सल्फर होते हैं। , सिलिकॉन, और विटामिन ई, बी1, बी2, और डी। एवोकैडो एक ऐसा फल है जिसका न केवल स्वाद अच्छा होता है बल्कि इसके कई स्वास्थ्य, आर्थिक और पर्यावरणीय फायदे भी होते हैं। पोषक तत्वों और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले गुणों के अनूठे मिश्रण के कारण यह प्राकृतिक दवाओं और सौंदर्य उद्योग दोनों में एक मांग वाला घटक है। इसके अतिरिक्त, दुनिया भर में एवोकैडो की बढ़ती मांग से संपन्न व्यवसाय उत्पन्न हुए हैं, और यह गारंटी देने के प्रयास किए जा रहे हैं कि उनका उत्पादन और खेती पर्यावरण की दृष्टि से टिकाऊ है। चिकित्सीय दृष्टिकोण से, एवोकाडो कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। इनमें हृदय–अनुकूल मोनोअनसैचुरेटेड वसा के उत्कृष्ट स्रोत पाए जा सकते हैं। एवोकैडो के सेवन को एलडीएल कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने और एचडीएल कोलेस्ट्रॉल के उच्च स्तर से जोड़ा गया है, जिससे हृदय रोग का खतरा कम हो जाता है। इसके अलावा, एवोकाडो की उच्च पोटेशियम सामग्री रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद कर सकती है। एवोकैडो में फाइबर भी उच्च मात्रा में होता है, जो पाचन में सहायता करता है और वजन प्रबंधन में लाभ देता है। फाइबर सामग्री तृप्ति में सुधार करती है, जो अधिक खाने को कम करके वजन प्रबंधन में मदद करती है। इसके अलावा, फल की उच्च फाइबर सामग्री मल त्याग के नियमन और कब्ज की रोकथाम में सहायता करती है। एवोकाडो में विटामिन सी और विटामिन ई जैसे उच्च स्तर के एंटीऑक्सीडेंट, उनके कई स्वास्थ्य लाभों में योगदान करते हैं। एंटीऑक्सिडेंट शरीर को ऑक्सीडेटिव तनाव से बचाते हैं और सूजन को कम करते हैं, जो विभिन्न प्रकार की पुरानी बीमारियों से संबंधित है। एवोकैडो के सेवन को आंखों के स्वास्थ्य में सुधार, प्रतिरक्षाविज्ञानी कार्य में सुधार और उम्र बढ़ने के संकेतों में कमी से जोड़ा गया है।

एवोकैडो का औषधीय महत्वः

एवोकैडो एक लोकप्रिय भोजन है जिसमें पोटेशियम और विटामिन डी की मात्रा अधिक होती है। दवा फल, पत्तियों और बीजों से बनाई जाती है। एवोकैडो फल का उपयोग कोलेस्ट्रॉल को कम करने, यौन इच्छा बढ़ाने और मासिक धर्म प्रवाह को प्रेरित करने के लिए किया जाता है। एवोकाडो में मौजूद कुछ तेल (जिन्हें ष्अनसैपोनिफ़िएबल फ्रैक्शंसष् के रूप में जाना जाता है) का उपयोग ऑस्टियोआर्थराइटिस के इलाज के लिए किया जाता है। बीज, पत्तियों और छाल का उपयोग करके पेचिश और दस्त का इलाज किया जाता है। त्वचा को आराम देने और उसकी मरम्मत करने के साथ–साथ गठिया, मसूड़ों में संक्रमण (पायरिया), और त्वचा का मोटा होना (स्केलेरोसिस) का इलाज करने के लिए एवोकैडो तेल तुरंत त्वचा पर लगाया जाता है। सोरायसिस एक त्वचा रोग है जिसका इलाज एवोकैडो तेल और विटामिन बी12 के संयोजन से किया जाता है। बालों के विकास को प्रोत्साहित करने और घाव भरने में तेजी लाने के लिए फल के गूदे को शीर्ष पर लगाया जाता है। दांत दर्द के इलाज के लिए बीज, पत्तियां और छाल का उपयोग किया जाता है। एवोकैडो को सबसे महत्वपूर्ण उष्णकटिबंधीय फलों में से एक माना जाता है क्योंकि इसमें वसा में घुलनशील विटामिन शामिल होते हैं जो अन्य फलों में असामान्य होते हैं, साथ ही प्रोटीन, पोटेशियम और असंतृप्त फैटी एसिड के महत्वपूर्ण स्तर भी होते हैं। लिपिडिक अंश में मौजूद यौगिकों के कारण, इस फल को इसके स्वास्थ्य लाभों के लिए पहचाना गया है, जिसमें ओमेगा फैटी एसिड, फाइटोस्टेरॉल, टोकोफेरोल और स्क्वैलीन शामिल हैं। शोध के अनुसार, एवोकैडो को विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य लाभों से जोड़ा गया है, जिसमें कम कोलेस्ट्रॉल और हृदय रोग का कम जोखिम शामिल है। एवोकाडो का गूदा एक प्रसंस्कृत फल है जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित पाक उत्पाद बनाने के लिए किया जा सकता है। पौधों की पत्तियों में पाए जाने वाले रसायनों के मूत्रवर्धक गुणों के कारण, एवोकैडो पत्ती के तरल अर्क का उपयोग आमतौर पर औषधीय वस्तुओं में किया जाता है।

एवोकैडो के अन्य अनुप्रयोगः

एवोकैडो ने अपने पोषण और हाइड्रेटिंग गुणों के कारण सौंदर्य और त्वचा देखभाल उद्योगों में लोकप्रियता हासिल की है। एवोकैडो के गूदे में अलग–अलग मात्रा में तेल होता है और इसका उपयोग अक्सर दवा और सौंदर्य प्रसाधन उद्योगों के साथ–साथ जैतून के तेल के समान वाणिज्यिक तेलों के निर्माण में भी किया जाता है। एवोकैडो तेल, जो फल से निकाला जाता है, स्वस्थ फैटी एसिड और एंटीऑक्सिडेंट में उच्च होता है। यह तेल विभिन्न प्रकार के त्वचा देखभाल उत्पादों में पाया जाता है और इसका उद्देश्य त्वचा को मॉइस्चराइज़ करना, मुक्त कणों से होने वाले नुकसान से बचाना और एक युवा उपस्थिति बनाए रखना है। एवोकैडो तेल बालों की देखभाल के लिए भी उपयोगी है क्योंकि यह बालों के रूखेपन और घुंघरालेपन को कम करके बालों के स्वास्थ्य और उपस्थिति में सुधार कर सकता है।

पर्यावरण संबंधी चिंताएँ और एवोकैडो उत्पादनः

एवोकैडो की मांग ने दुनिया भर में लाभदायक व्यवसाय के अवसर प्रदान किए हैं। दुनिया के सबसे बड़े एवोकाडो उत्पादक मेक्सिको जैसे देशों में एवोकाडो के निर्यात से जबरदस्त आर्थिक वृद्धि हुई है। किसान, मजदूर और आपूर्ति श्रृंखला में शामिल लोग सभी एवोकैडो व्यवसाय में काम पा सकते हैं। इसके अलावा, एवोकैडो की लोकप्रियता के परिणामस्वरूप नए सामान और पाक संबंधी नवाचारों का विकास हुआ है, जिसने एवोकैडो उद्योग को और भी अधिक बढ़ावा दिया है। हालाँकि, एवोकैडो व्यवसाय पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करता है। एवोकाडो के उत्पादन के लिए बड़ी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ क्षेत्रों में पानी की कमी और पर्यावरण बिगड़ गया है। इसके अतिरिक्त, प्रमुख एवोकैडो उत्पादक क्षेत्रों में एवोकैडो पौधों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए वनों की कटाई देखी गई है। एवोकैडो कृषि की दीर्घकालिक लाभप्रदता और पर्यावरणीय प्रभाव को बनाए रखने के लिए, इन पर्यावरणीय समस्याओं के लिए टिकाऊ कृषि पद्धतियों और सावधानीपूर्वक जल प्रबंधन की आवश्यकता होती है। इन समस्याओं के समाधान के लिए, एवोकैडो व्यवसाय में स्थायी प्रथाओं को स्थापित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। किसान पानी की खपत को कम करने के लिए पानी बचाने वाली सिंचाई प्रौद्योगिकियों और

रणनीतियों को लागू कर रहे हैं।

इसके अलावा, जैव विविधता को बढ़ावा देने और एवोकैडो की खेती के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए छायादार पेड़ों के साथ एवोकैडो एकीकरण जैसी कृषि वानिकी तकनीकों का पता लगाया जा रहा है। उद्योग के भीतर पर्यावरणीय प्रबंधन और निष्पक्ष श्रम प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए टिकाऊ एवोकैडो उत्पादन के लिए रेनफॉरेस्ट एलायंस और फेयर ट्रेड प्रमाणन कार्यक्रम स्थापित किए गए हैं। ये प्रमाणपत्र पुष्टि करते हैं कि उपभोक्ताओं द्वारा खाया गया एवोकाडो पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता देने वाले तरीकों से उगाया गया था।

एवोकैडो फार्म

निष्कर्ष:

इसकी संरचना और इसके घटकों के फायदों को ध्यान में रखते हुए, एवोकैडो अन्य औद्योगिक सामग्रियों के लिए एक शानदार प्रतिस्थापन हो सकता है, विशेष रूप से लुगदी प्रसंस्करण या तेल निष्कर्षण के लिए। विभिन्न प्रकार के पौधों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए क्योंकि वे व्यापक खेती और पूरे वर्ष फल की उच्च आपूर्ति को सक्षम करते हैं। इस फसल को निर्यात किया जा सकता है, तेल निकालने के लिए उपयोग किया जा सकता है, संसाधित वस्तुओं में जोड़ा जा सकता है, या फार्मास्युटिकल और सौंदर्य प्रसाधन क्षेत्रों में कच्चे घटक के रूप में उपयोग किया जा सकता है, जिससे उच्च मूल्य वर्धित वस्तुओं का उत्पादन किया जा सकता है। तेल निकालने के बाद बचे हुए गूदे का उपयोग संभवतः पाक वस्तुएं बनाने में किया जा सकता है। इसके अलावा, एवोकाडो के कई स्वास्थ्य, आर्थिक और पर्यावरणीय फायदे हैं। वे विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं, जिनमें हृदय स्वास्थ्य संवर्धन, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल सहायता और एंटीऑक्सीडेंट सुरक्षा शामिल हैं। सौंदर्य उद्योग में एवोकैडो को उनके मॉइस्चराइजिंग और एंटी–एजिंग गुणों के लिए महत्व दिया जाता है। एवोकैडो की मांग के परिणामस्वरूप दुनिया भर में उद्यमों में तेजी आई है, जो आर्थिक विकास और नौकरी की संभावनाओं में योगदान दे रहा है। हालाँकि, नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए उद्योग की दीर्घकालिक लाभप्रदता को बनाए रखने के लिए एवोकैडो की खेती के पर्यावरणीय प्रभाव को संबोधित करना और टिकाऊ कृषि प्रथाओं को प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण है।

भोजपुरी कविता

'खड़तल'

❑ **मंगतराम शास्त्री**

ठाड्डे बेबस होन्दे देक्खे।
तेग्गे सूई टोन्दे देक्खे।।

टैम नहीं मुहताज किसे का
राजे मटके ढोन्दे देक्खे।

माँ बाप्पू बाळ्कां कै स्याह्मी
नाड़ तळे नै गोन्दे देक्खे।

फूल बिछाए थे जिन खात्तर
वें भी काण्डे बोन्दे देक्खे।

बखत पड़े पै निरधन के तो
भाई श्यान लकोन्दे देक्खे।

दौलत की मेहरबान्नी तै
कमळे स्याणे होन्दे देक्खे।

ऐश अमीरी के लालच म्हं
साधू आप्पा खोन्दे देक्खे।

खुद नै जो भगवान कहैं थे
जेळ हुई तो रोन्दे देक्खे।

लठ बजवाकै मुल्ला पण्डित
एक जगह पै सोन्दे देक्खे।

बोट्टां खात्तर निरधन आग्गै
जबर तमाक्खू मोन्दे देक्खे।

बाळक घट गे बैदे बढ गे
मास्टर पूड़ी पोन्दे देक्खे।

ई वी एम सरकार बणावै
वोटर न्यूं जंग झोन्दे देक्खे।

चांद्पै बुढिया चरखा कात्तै
बाप जुआक भलौन्दे देक्खे।

कोरट के म्हं गोळी चाल्ली
मुन्सिफ़ बहरे होन्दे देक्खे।

छान टपकदी देख हंसै तूं
हमनै लैन्टर चोन्दे देक्खे।

कोठ्ठी म्हं सुपन्यां के कातिल
खून्नी लत्ते धोन्दे देक्खे।

खड़तल नै तो अपणे घर कै
गारा के भी लोन्दे देक्खे।

व्यवसायिक कृषि

Peer Reviewed

उच्च अध्ययन में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका

❑ डॉ. अजय शुक्ला और माधुरी तिवारी

सार

यह लेख कंप्यूटर विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) की दुनिया को छानने का प्रयास करता है, जिसमें मानव बुद्धि की आवश्यकता वाले कार्यों को करने में सक्षम बुद्धिमान मशीनों का निर्माण करने को महत्वपूर्ण माना गया है। ष्कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंसष् के रूप में हिंदी में संदर्भित, यह अंतर्विद्यालयी विज्ञान विभिन्न दृष्टिकोणों को शामिल करता है और मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग प्रौद्योगिकियों के विकास के साथ विकसित हो रहा है।

शब्द 'कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस' का प्रवर्तन 1955 में जॉन मैकार्थी ने किया, जिसमें उन्होंने बुद्धिमान मशीनों के बनाने का विज्ञान और इंजीनियरिंग की परिभाषा दी। लेख इसे उदाहरण स्वरूप परिचित क्षेत्रों में मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग में उच्च प्रगति के साथ कृत्रिम बुद्धि के परिवर्तन को बलिष्ठ करता है। ये प्रौद्योगिकी की ऊर्जावानी रूप से कई उद्योगों को पुनररूपित कर रही हैं। लेख इस अनुसंधान के साथ जुड़े हुए शिक्षा संदर्भों में कृत्रिम बुद्धि के नवीनतम अनुप्रयोगों को प्रस्तुत करता है।

निष्कर्ष में, लेख जॉन मैकार्थी के उपनामक की उत्पत्ति को निरूपित करता है और कृत्रिम बुद्धि के तत्व मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग प्रौद्योगिकियों के माध्यम से क्या–क्या परिवर्तन हो रहे हैं, खासकर शिक्षा क्षेत्र में। लेख अंतर्विद्यालयी अनुसंधान की अद्यतित स्थिति और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के सामान्य दृष्टिकोण में मौद्रिक योगदान प्रदान करता है।

मुख्य शब्द (Keyword): बुद्धिमत्ता, कृत्रिम बुद्धि, उच्च शिक्षा, मशीन लर्निंग, टीचिंग, टीचर बॉट

प्रस्तावना

यह लेख कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के विवादपूर्ण क्षेत्र की ओर मुड़ता है, जिसमें यह दावा किया गया है कि तेजी से बढ़ती हुई मशीनें, जिन्हें पहले माना जाता था कि वे मानव जैसी समझ चाहिए, अब कृत्रिम बुद्धिमत्ता की परंपराओं के परे काम कर रही हैं। जैसा कि मशीनें मानव बुद्धिमत्ता के साथ जुड़े कार्यों में उच्च क्षमताओं का प्रदर्शन करती हैं, वैसे ही कृत्रिम बुद्धिमत्ता का क्षेत्र विस्तार हो रहा है, पारंपरिक सूचना की सीमाओं को छूते हुए। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का दावा मानव बुद्धि के महत्वपूर्ण पहलुओं को नकल कर सकने का है। आज, यह प्रौद्योगिकी उद्योग का एक महत्वपूर्ण और अनिवार्य हिस्सा बन गई है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के वैज्ञानिक अन्वेषण का आरंभ 1956 में हुआ, जब जॉन मैकार्थी ने इसके अध्ययन की शुरुआत की। हालांकि, यह 1955 में था जब मैकार्थी ने ष्कृत्रिम बुद्धिमत्ताष् शब्द का आधिकारिक रूप से गढ़ा, इसे बुद्धिमान मशीनें बनाने के विज्ञान और इंजीनियरिंग का दर्जा देते हुए। लेख में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की तेजी से प्रगति को बलिष्ठ किया गया है, खासकर उच्च शिक्षा के भीतर सेवाओं को प्रभावित कर रहा है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता की अवधारणा सभी के लिए सामान्य नहीं हो सकती है, हाल के वर्षों में इसकी विकास में सामर्थ्यपूर्ण प्रगति हुई है। खासकर, 2017 में संयुक्त राज्यों में एक सर्वेक्षण ने दिखाया कि 1,500 वरिष्ठ कार्यकारी नेताओं में से केवल 17ः कृत्रिम बुद्धिमत्ता के साथ परिचित थे। हालांकि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता की हाल की प्रगति चमत्कारी है, जिसमें इसकी हाल के वर्षों में प्रगति का अद्भुत प्रदर्शन हो रहा है।

निष्कर्ष में, लेख ने कृत्रिम बुद्धिमत्ता के महत्वपूर्ण विकास और प्रभाव को रोशन किया है। क्षेत्र में हाल की कदम बढ़ते हुए उपलब्धियों और सफलताओं को स्वीकृत करते हुए स्पष्ट है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक परिवर्तनकारी बल के रूप में उभरी है, उद्योगों को पुनः रूपित करती है और मानव जीवन को प्रभावित करती है। इसकी क्षमताओं की विवादास्पद प्रकृति ने नैतिकता, विवेक, और मशीनों की समाज में बढ़ती भूमिका पर चर्चाएं उत्तेजित की हैं। सम्ग्र रूप से, अध्ययन ने हाल के वर्षों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के गतिशील और प्रभावशाली विकास में मूल्यबद्ध दृष्टिकोण प्रदान किया है।

परिकल्पना

इस शोध परियोजना में, शोधकर्ता ने डेटा के विश्लेषण के लिए आवश्यक जानकारी और डेटा इकट्ठा करने के लिए सकारात्मक विचारधारा का चयन किया। ष्वर्णनात्मक खोजपूर्ण ढांचेष् (न्यूमैन एंड गफ 2020) के शब्दों से जुड़ा द्वितीयक डेटा विश्लेषण का मुद्दा है। इसे समझने और विश्लेषण के लिए, शोधकर्ता ने इस विषय पर या इसके संबंध में सभी लेखों, पत्रिकाओं, वेबसाइटों, और शोध पत्रों का समीक्षा किया है, जो मोहजन 2018 के इस विषय के समीप हैं।

शोध की कार्यप्रणाली

इस अध्ययन में ज्ञाति विकसित करने के लिए एक सुधारित गुणसूची विधि का अनुसरण किया गया है, जिससे मौजूदा लेखों का उपयोग करके ज्ञान पैदा किया जा सकता है, जो महत्वपूर्ण और पीयर–समीक्षित हैं। विषयात्मक विश्लेषण ने लेखों के गुणधर्मों का पुनरावलोकन करके उन्हें अनुसंधान प्रक्रिया में शामिल किया है, ताकि कृत्रिम बुद्धिमत्ता की महत्वपूर्णता की जाँच की जा सके जो उच्च शिक्षा में है।

शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का संबंधरू भूमिका और विकास

इस लेख में उठाए गए मुख्य विषय के रूप में युवा की शिक्षा में कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का महत्व बताया गया है, जो देश के भविष्य के नेताओं और नवप्रवर्तनकर्ताओं को तैयार

व
ई–मेलः m

करने में मदद कर सकता है। यहां यह स्पष्ट है कि भारत में शिक्षा क्षेत्र में भी इस तकनीकी उन्नति का दायरा बढ़ता है और इसका प्रभाव शिक्षाविदों पर हो रहा है।

शिक्षाविद्याओं को अपनी रणनीतियों को इस तकनीकी परिवर्तन के साथ समायोजित करने की आवश्यकता है ताकि वे युवा के दिमाग को सक्षम और सुसंगत बनाने के लिए सही दिशा में कार्य कर सकें। शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के प्रभाव की समीक्षा करते समय, शोधकर्ताओं के द्वारा उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा को सुनिश्चित करने के लिए इसे समृद्धि का सामान बनाने के लिए विभिन्न रणनीतियों की आवश्यकता है।

उच्च अध्ययन के छात्रों के लिए सार्वभौमिक रूप से पहुंचने योग्य

इस लेख में कृत्रिम बुद्धि (AI) की भूमिका पर चर्चा है जो शिक्षा में सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करने में सहायक है, विभिन्न भाषाओं और इंद्रिय समस्याओं का समर्थन करने में। यह साबित करता है कि कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के उपयोग से वैश्विक कक्षाएं सभी के लिए उपलब्ध हो सकती हैं, जिनमें वे लोग भी शामिल हैं जो अलग–अलग भाषाएं बोलते हैं या जिन्हें देखने या सुनने की अक्षमता है। यह उन छात्रों के लिए भी संभावनाएं खोलता है जो किसी कारण से, जैसे कि बीमारी के कारण, कॉलेज नहीं जा सकते या जिन्हें एक अलग स्तर पर या किसी विशेष प्रकार के शिक्षण की आवश्यकता है, जो उनके स्कूल में उपलब्ध नहीं हैं। कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग स्कूलों के बीच और पारंपरिक ग्रेड स्तरों के बीच सलाखों को तोड़ने में मदद कर सकता है।

विश्लेषणकर्ताओं का अनुमान है कि 2022–2025 के दौरान भारतीय शिक्षा क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अनुप्रयोग में 40ः की वृद्धि हो सकती है। जैसे कि छात्र एक ऐसे भविष्य की तैयारी कर रहे हैं जहां कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस वास्तविकता है, इसलिए शिक्षकों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे छात्रों को प्रौद्योगिकी के साथ अवगत कराएं और उन्हें सुनिश्चित करें।

शिक्षक और कृत्रिम बुद्धि के बीच समन्वय और सहयोग

कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) ने शिक्षा के क्षेत्र में पहले से ही कुछ उपकरणों में अपना योगदान दिया है जो कौशल और परीक्षण प्रणालियों को विकसित करने में मदद करते हैं। यह आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के प्रयोग से शैक्षिक समाधानों में परिपक्वता बढ़ रही है, और आशा है कि इससे सीखने और पढ़ाई के अंतराल को भरने में मदद होगी। हाल ही में बृहदीश्वर ने शिक्षकों के लिए सूचना प्रौद्योगिकी और AI में क्षमता निर्माण कार्यक्रमों की घोषणा की है, जिससे कक्षा 11 के शिक्षकों को आईबीएम के साथ प्रशिक्षित किया जाएगा।

यह मशीनों और शिक्षकों के सहयोग से शिक्षा को एक नए स्तर पर ले जाने में मदद कर सकता है, जहां शिक्षक और कृत्रिम बुद्धि का समन्वय हो, और वे छात्रों को सर्वोत्तम परिणाम प्रदान करने के लिए मिलकर काम करें। आज के छात्रों के लिए ऐसे भविष्य में काम करने की आवश्यकता है, जहां AI का उपयोग हो और वास्तविकता हो, इसलिए शिक्षकों को छात्रों को प्रौद्योगिकी के साथ बाकी रखने और परिचित करने के लिए प्रेरित करना महत्वपूर्ण है।

उच्च अध्ययन के छात्रों के लिए व्यक्तिगत सीख

इस लेख में आपकी चुनी हुई विषय वस्तु ष्बच्चों के लिए कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोगष् के विभिन्न पहलुओं पर गहरा विचार किया गया है। लेखक ने बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धि के प्रयोग की एक विकल्पशील रणनीति को समझाने के लिए विभिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने यह प्रतिस्थापन किया है कि यह कैसे बच्चों को शैक्षिक दृष्टिकोण से समर्थन प्रदान कर सकता है और उनकी शिक्षा में नए और सुधारित तरीकों का प्रस्तुतान कर सकता है।

इस लेख में प्रस्तुत किए गए कई सुझावों और विचारों ने यह दिखाया है कि कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग बच्चों को उनके अधिगम प्रक्रिया में समर्थन प्रदान करने के लिए कैसे किया जा सकता है। इससे बच्चों की अधिगम प्रक्रिया में स्थिति और समर्थन में सुधार हो सकता है, जिससे उन्हें अधिक सफलता हासिल करने में मदद मिल सकती है।

सम्पूर्ण अध्ययन का संक्षेप देखते हुए, इस लेख ने बच्चों के शैक्षिक विकास के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धि का सकारात्मक प्रभाव बताया है, जिससे वे सहजता से अपनी शिक्षा में आगे बढ़ सकते हैं। आलेखक ने इस पर ध्यान केंद्रित किया है कि कृत्रिम बुद्धि बच्चों को उनकी अधिगम प्रक्रिया में सामग्री को समझने में सहारा प्रदान कर सकती है, जिससे उनका शिक्षा में रूचि और समझ में वृद्धि हो सकती है।

छात्र विश्व को सत्यापनीय प्रतिक्रिया प्रदान करने के लिए कृत्रिम बुद्धि (AI) का उपयोग कर सकते हैं।

इस लेख में आपकी चुनी हुई विषय वस्तु ष्कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोगष् के तेजी से विकास के संदर्भ में विशेष रूप से बातचीत की गई है। लेखक ने उच्च शिक्षा में तकनीकी उन्नति और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के संबंध में छात्रों के स्वयं के प्रदर्शन से संबंधित अधिक विश्वसनीय प्रतिक्रिया प्राप्त कर सकते हैं।

आलेख में बच्चों को शिक्षित करने के लिए कृत्रिम बुद्धि का उपयोग कैसे किया जा सकता है, इस पर गहराई से जाँच की गई है। लेखक ने यह भी प्रमाणित किया है कि यह प्रक्रिया तब ही सफल हो सकती है जब छात्र अपने स्वयं के प्रदर्शन के माध्यम से अच्छे प्रतिक्रियाएँ प्राप्त करते हैं और उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं।

कृत्रिम बुद्धि (AI) शिक्षकों को सीखने में विकलांगता पहचानने में मदद कर सकती है।

चुनौतीपूर्ण या क्लबंस जैसी सीखने की अक्षमताओं को पहचानने में मौजूद परीक्षण विधियाँ कितनी प्रभावी हैं और कैसे शिक्षकों को इसमें मदद कर सकती हैं। यह बताया गया है कि सभी मौजूदा परीक्षण विधियाँ इस क्षमता को पहचानने में सफल नहीं हैं और इसलिए नई क्रियाशील बुद्धिमत्ता प्रणाली का विकास किया जा रहा है।

लेखक ने इसमें उजागर की जा सकने वाली छिपी स्थितियों के पहचानने के लिए इस प्रणाली की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए शिक्षकों की मदद करने की महत्वपूर्णता पर बात की है। इससे शिक्षक सीधे रूप से अपने छात्रों की चुनौतीपूर्णाओं को समझ सकते हैं और उन्हें उनकी शिक्षा में मदद करने के लिए संसाधनों का सही तरीके से उपयोग कर सकते हैं।

इस अध्ययन का संबोधन करते हुए, यह कहा जा सकता है कि

नई बुद्धिमत्ता प्रणाली शिक्षा क्षेत्र में एक उन्नति है जो शिक्षकों को छात्रों की सीख को सटीकता से मापने और समझने में मदद कर सकती है।

शिक्षकों को अधिक डेटा उपलब्ध हो सकता है–

यह लेख कक्षा की सफलता के निर्धारण में कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) के आगमन के प्रभाव को विश्लेषण करता है। इसमें बताया गया है कि शिक्षकों को आगे बढ़ाने के लिए डेटा से भरपूर नई तकनीकों का उपयोग करने से कैसे सहायता मिल सकती है।

लेखक द्वारा प्रस्तुत किए गए तथ्यों के अनुसार, AI शिक्षा क्षेत्र में एक क्रांति ला सकता है, जहाँ छात्रों की सीखने की अक्षमता को बेहतर ढंग से समझा जा सकेगा। यह शिक्षकों को उन क्षेत्रों की पहचान करने में मदद कर सकता है जो शिक्षा में प्रभावी नहीं हैं या जहां छात्र संघर्ष कर रहे हैं। इससे शिक्षकों को छात्रों की जरूरतों को समझने में सुधार हो सकती है और सीधे रूप से उन्हें सहायता प्रदान करने का सक्षम बना सकता है।

इस लेख में प्रस्तुत किए गए विचार से सामान्य योजना, शिक्षकों को आगे बढ़ाने और छात्रों की प्रदर्शन क्षमताओं को सुधारने की दिशा में एक सकारात्मक परिवर्तन का सुझाव दिया गया है। इसका परिणामस्वरूप, आने वाले समय में शिक्षा क्षेत्र में एक नई दिशा मिल सकती है, जिससे शिक्षक और छात्र दोनों को बेहतर समर्थन मिल सकता है और सीधे रूप से सिखाई जा सकती है।

शिक्षा को वैश्विक रूप से पहुंचने और पहुंचने योग्य बनाया जा सकता है–

कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) कैसे छात्रों को कहीं भी, कभी भी सीखने की क्षमता प्रदान कर सकता है। यह एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रदान करता है, जहां विद्यार्थी शिक्षा के लिए स्थानीय सीमाओं से मुक्त हो सकते हैं और उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा का आनंद उठा सकते हैं।

लेखक द्वारा बताया गया है कि AI कैसे छात्रों को अपने उदाहरण, योग्यताओं और आवश्यकताओं के हिसाब से सीखने की क्षमता प्रदान कर सकता है। इससे छात्रों को अपने गुणों को समझने और सहयोगी सीखने के माध्यमों की पहचान में मदद मिल सकती है, जो उनके शैक्षिक और व्यक्तिगत विकास को समर्थन कर सकते हैं।

शिक्षा बाजार में वैश्विक एआई के उपयोग की दर

लेख में दिखाया गया है कि ।ᑭ शिक्षा में एक महत्वपूर्ण क्रांति का कारण बन सकता है, जिससे विभिन्न भूगोलिक क्षेत्रों के छात्रों को समर्थन प्रदान किया जा सकता है और उन्हें समर्थन और प्रेरणा के साथ शिक्षा का अधिक सुलभ एवं सस्ता एक माध्यम प्रदान किया जा सकता है।

यह लेख दिखाता है कि ।ᑭ कैसे शिक्षा क्षेत्र में सुधार कर सकता है और छात्रों को सीखने में और सुधारने में कैसे समर्थन प्रदान कर सकता है। यह एक नई दिशा दिखा सकता है जो शिक्षा को सभी के लिए सुलभ और उपयुक्त बना सकती है, साथ ही छात्रों को अधिक सामरिक और सांगठनिक रूप से जोड़ने का एक माध्यम प्रदान कर सकती है।

उच्च अध्ययन कर रहे छात्रों के लिए कृत्रिम बुद्धि का उज्ज्वल भविष्य–

भविष्य की कक्षा कृत्रिम बुद्धिमत्ता का सही उपयोग करके सीखने को समझने और निजीकृत करने में कैसे सहारा प्रदान कर सकती है। लेखक ने बताया है कि अमेरिका के बिल गेट्स ने अपने फाउंडेशन के माध्यम से व्यक्तिगत शिक्षण तकनीक में निवेश किया है, जिससे शिक्षा में नए परिवर्तन आ सकते हैं।

लेखक द्वारा कहा गया है कि कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कैसे प्रत्येक छात्र की आवश्यकताओं को समझने में मदद कर सकता है और उन्हें व्यक्तिगत रूप से अनुकूलित कर सकता है। लेख में दिखाया गया है कि कृत्रिम बुद्धि या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कैसे छात्रों को शैक्षिक आवश्यकताओं के साथ मिलाकर सीखने में मदद कर सकता है।

इस लेख का निष्कर्षः

यह लेख दिखाता है कि भविष्य की कक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग कैसे किया जा सकता है और इससे कैसे शिक्षा क्षेत्र में परिवर्तन आ सकता है। इससे शिक्षकों को और अधिक रचनात्मक होने का अवसर मिल सकता है और शिक्षा को सभी के लिए सुलभ और पहुंचने वाली बना सकता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के द्वारा उत्पन्न संभावनाओं का आलोचनात्मक अध्ययनः

यह लेख विद्वेषी दृष्टिकोण से कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के प्रभावों पर ध्यान केंद्रित है। आलेखक बताते हैं कि कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के मिश्रण ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति को उत्पन्न किया है, लेकिन इसके साथ ही खतरे भी हैं। इसने मशीनों को स्वयं सीखने की क्षमता प्रदान की है, जिससे सकारात्मक और नकारात्मक परिणाम हो सकते हैं। लेखक स्टीफन हाकिंग के द्वारा दृष्टिकोण देते हैं कि इस प्रकार की तकनीकी प्रगति का नियंत्रण बनाए रखना महत्वपूर्ण है। विश्लेषण के अनुसार, इसे सही तरीके से प्रयोग करने से ही इसके सकारात्मक प्रभाव हो सकते हैं, जो शिक्षा, देखभाल, और सामाजिक स्थिति में सुधार कर सकते हैं।

कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की प्रगति से होने वाले सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों की चुनौती और संभावनाओं का अध्ययन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसे सही दिशा में प्रयोग करके ही हम इस तकनीकी युग में समृद्धि और सुरक्षा की स्थिति सुनिश्चित कर सकते हैं।

निष्कर्षः –

इस लेख का मुख्य उद्देश्य कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के साथ लर्निंग प्लेटफॉर्म के प्रभाव को समझाना है। रिसर्च पेपर रैंड कार्पोरेशन के एक शोध पत्र पर आधारित है जो दिखाता है कि यह प्रौद्योगिकी शिक्षा के क्षेत्र में कैसे बदलाव कर रही है। लेखकों के अनुसार, मशीन लर्निंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का अभ्यास स्कूल और कॉलेज स्तर पर एक नई पीढ़ी को तैयार कर रहा है, जो स्मार्टफोन और टैबलेट का उपयोग करके नियमित कार्यों को स्वतंत्रता से कर सकती है।

आलेख में बताया गया है कि यह प्रौद्योगिकी शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग कैसे स्मार्ट लर्निंग प्लेटफॉर्म्स को बना सकता है जो शिक्षा को बेहतर बनाने में मदद कर सकते हैं। यह नई प्रौद्योगिकी शिक्षा के साथ विद्यार्थियों और शिक्षकों को नए और सुधारित तरीकों से सीखने का अवसर प्रदान कर सकता है।

कृत्रिम बुद्धि और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के साथ लर्निंग प्लेटफॉर्म्स का प्रभावशील और सकारात्मक हो सकता है। इससे शिक्षा में सुधार हो सकती है और छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का नया दृष्टिकोण मिल सकता है। हालांकि, इस प्रौद्योगिकी के सही और सुरक्षित उपयोग की आवश्यकता है ताकि यह समाज में सकारात्मक परिणाम ला सके।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:

- शर्मा, आर. ए. (2012). 'शिक्षा तकनीकी के मूल तत्व', मेरठरू आर लाल पब्लिकेशन्स।
- डा. मोहन लाल आर्य (2017). 'ज्ञान और पाठ्यक्रम', मेरठः आर लाल पब्लिकेशन्स।
- डा. मोहन लाल आर्य (2017). 'शिक्षा के ऐतिहासिक एंव राजनीतिक परिपेक्ष्य', मेरठरू आर लाल पब्लिकेशन्स।
- आचार्य पं. श्री राम शर्मा (1998). 'भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व', मथुराः जनजागरण प्रेस।
- सिंह सौरभ (2017). 'मूल्य और शान्ति शिक्षा', आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
- चेन, एल., चेन, पी., और लिन, जेड. (2020)। शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्तारू एक समीक्षा। आईईईई एक्सेस, 8, 75264–75278। यहां से लिया गयाः https://ieeexplore.ieee.org/iel7/6287639/8948470/09069875.pdf (पुनः प्राप्तः 3 जून 2022,
- चेन, एक्स., ज़ी, एच., जू, डी., और ह्वांग, जी.जे. (2020)। शिक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के उदय के दौरान अनुप्रयोग और सिद्धांत में अंतराल। कंप्यूटर और शिक्षारू आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, 1, 100002। यहां से लिया गयाः https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S2666920X20300023 'पुनः प्राप्तः 3 जून 2022,
- एनिम, डब्ल्यू.ओ. (2021)। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर सतत विकास लक्ष्यरू विश्वविद्यालय प्रणाली में ई–लर्निंग संसाधनों और शिक्षाशास्त्र की समीक्षा। लाइब्रेरी फिलॉसफी एंड प्रैक्टिस (ई–जर्नल), 5578। यहां से लिया गयाः
- https://www.researchgate.net/profile/Wisdom-
- Anyim/publication/352261611_Sustainable_Development_Goal_on_Quality_Education_A_Review_of_E-Learning_Resources_and_Pedagogy_in_the_University_System/links/60c2
- 78b44585157774c7c529/स्थायी–विकास–लक्ष्य–पर–गुणवत्ता & Education & A & Review & of & E& Learning&Resources&and&Pedagogy&in&the&University&System-pdf [पुनः प्राप्तः 3 जून 2022]
- होम्स, डब्ल्यू., बालिक, एम. और फ़ाडेल, सी., 2019. शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता। बोस्टनरू सेंटर फॉर करिकुलम रिडिजाइन, 2019, पीपी.1–35। यहां से लिया गया% https:@@curriculumredesign-org@wp&content@uploads@AIED&Book&EÛcerpt&CCR-pdf [पुनः प्राप्तरू 3 जून 2022]
- सेता, एच.बी., हिदायतो, ए.एन., और आबिदीन, जेड. (2020)। इंडोनेशियाई उच्च शिक्षा में ई–लर्निंग सेवाओं की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारकरू छात्रों का दृष्टिकोण। सूचना प्रौद्योगिकी शिक्षा जर्नल, 19. यहां से लिया गयाः http:@@jite-org@documents@Vol19@JITE&Rv19p259&286theresiamati5693-pdf [पुनः प्राप्तः 3 जून 2022]
- Deakin University (2014). IBM Watson now powering Deakin. A new partnership that aims to exceed students'needs. http://archive.li/kEnXm . Accessed 30 Oct 2016.
- Gibney, E. (2017). Google secretly tested AI bot. Nature, 541(7636), 142. https://doi.org/10.1038/nature.2017.21253.
- Kurzweil, R. (2010). The singularity is near. Gerald Duckworth & Co.,
- Rainie, L., Anderson, J. (2017), The Future of Jobs and Jobs Training, Pew Research Center, Retrieve from http://www.pewinternet.org/2017/05/03/the-future-of-jobs-and-jobs-training/
- Milligan, S., Luo, R., Hassim, E., Johnston, J. (2020). Future-proofing students: What they need to know and how educators can assess and credential them. Melbourne Graduate School of Education, The University of Melbourne. 17-29. Retrieved from https://education.unimelb.edu.au/__data/assets/pdf_file/0005/3397469/MGSE_FutureProofing-Students_Web_Updated-9-7-20.pdf
- Mohajan, H. K. (2018). Qualitative research methodology in social sciences and related subjects. Journal of Economic Development, Environment and People, 7(1), 23-48. Retrieved from: https://mpra.ub.uni-muenchen.de/85654/1/mpra_paper_85654.pdf [Retrieved on: 3rd june 2022]
- Newman, M., & Gough, D. (2020). Systematic reviews in educational research: Methodology, perspectives and application. Systematic reviews in educational research, 3-22. Retrieved from: https://library.oapen.org/bitstream/handle/20.500.12657/23142/1007012.pdf?sequence=1#page=22 [Retrieved on: 3rd june 2022]

Woman in Agriculture

Peer Reviewed

International Woman day Special

Role of farm women in transforming agriculture in India

❑ **Mr. Y. P. Singh**

Women farmers play an important role in the agriculture sector of India. The farm women are engaged at all levels of agricultural value chain; *i.e.*, production- pre-harvest, post-harvest processing, packaging, marketing to increase productivity in agriculture. Nearly 75% of the full-time workers on Indian farms are women who contribute about 60-80% of total food production in India. Women's participation rate is as high as 70% in the livestock sector, 70% in rice production, about 47% in tea plantations and cotton cultivation; 45% in oilseeds production, and 39% in vegetable production. Backyard poultry farming run mainly by women contribute 20% to the chicken Industry. In coastal areas, women farmers play a great role in aquaculture. They perform all sorts of activities from catching fish to cleaning, drying, preserving, and even selling in markets. Despite their large presence and their contribution, women farmers face discrimination and marginalization. They are paid about 22% less than their male counterparts and have less access to inputs such as seeds, fertiliser, labour, and finance and critical services like training and insurance. As male workers are migrating to cities for better income and livelihoods, agriculture in India is going through the process of feminization. Farm women have to take up greater responsibility in managing their farms in addition to their existing traditional responsibilities of cooking, domestic chores, and child-rearing which is taking a toll on their physical and mental health. It's high time, that the voices of these overworked and underpaid women in agriculture are heard and they get their fair share. Policies that focus on providing access to land, credit facilities, and inputs and strengthening these farm women through organizing them in FPOs and SHGs can prove to be effective in empowering agricultural women, who are crucial to the food security of India.

Introduction

Agriculture is considered as the backbone of the Indian rural economy and is a family enterprise. It is an important engine of growth and poverty reduction. India's economic security is heavily dependent on agriculture. In terms of employment, it is the most important source of income, especially for rural women. According to 2011 World Bank Data only, 17.5 per cent of India's gross domestic product (GDP) is accounted for by agricultural production. Based on 2012 data, India is home to the fourth largest Participation of Women in Agricultural Production sector in the world. Role of women in agricultural sector cannot be ignored as they consist of 33% agricultural labour force and 48% self-employed farmers. Rural woman farmer play an important role on the economic development of India because 73.2% of rural women workers are farmers. The woman in rural areas are also taking care of the land, that is owned by their husband, father, father-in-law or any male relatives. In India, agricultural sector continues to employ and absorb female workforce but most of the times fails to give them the proper recognition of an employed or hired labour instead it is made a part of their household chores. Women make essential contributions to the agricultural and rural economies in all developing countries. Their roles vary considerably between and within regions and are changing rapidly in many parts of the world, where economic and social forces are transforming the agricultural sector. Women represent upwards of 40 per cent of the agricultural labour force globally and grow much of the food for their families and communities and yet they own less than 15 per cent of the land. Moreover, men's migration from rural areas to cities has only increased women's responsibilities on the farm and driven the feminization of agriculture in many countries. Yet, many women are still seen merely as labourers, with little decision-making power, rather than as independent farmers in need of support. Many women farmers cannot access productive resources–such as inputs, training, and finance–because they do not have secure, documented land rights. Without land, women have nothing to leverage as collateral for formal finance and are often excluded from government programs to support farmers, such as subsidized inputs and training. In many countries, few land rights are registered or recorded, and women's land rights are the least secure. For example, women represent only 13.9 per cent of all recorded landholders in India despite making up 65 per cent of the agricultural workforce. Moreover, women farmers without land records are unable to access the more competitive loan rates offered to individual landowners and are excluded from leadership roles in farmer producer organizations. Development programs supporting farmers often fail to adequately benefit women by setting beneficiary targets without addressing their constraints, such as mobility, land ownership, and other household responsibilities.

It has estimated that 180 million hectares of farmland with 140 million of which are planted and continuously cultivated. The role of women in agriculture as female

Emeritus Scientist, ICAR- Central Soil Salinity Research Institute, Regional Research Station, Lucknow
Email - ypsingh.agro@gmail.com

labour is not highlighted in India. Despite of their presence in activities sowing, transplanting and post-harvest operations they are considered as an invisible workers. Despite of various social, economic and various other constraints women have high-level participation in agriculture and they are very committed in their agricultural activity. Overall, the level of involvement of women in farm decision making was found very medium. The extent of involvement and decision making in activities like intercultural operations is 48%, in harvesting of crops 45%, storage of farm produce is 43%, in sale of farm produce and in subsidiary occupation like animal husbandry and dairy business is 39% and financial management is 36% only. Further despite of their extensive and active involvement in agriculture of India, they are not considered for decision making in farm activities. Women participation in agriculture will be acknowledged when women farmer will actively participate to build and improve their knowledge and gain access to new and necessary information to make use of most of them in their farming activities. The primary need of women working or seeking employment in various agricultural and non–agricultural activities is to meet the family needs and to enhance the family income.

Table 1. Distribution of women workers in India

Source: Registrar General of India, New Delhi, 2021

Years	Total female population (million)	Cultivators (%)	Agriculture Labourers (%)	Industry and service (%)
1951	173543	45.3	31.3	23.3
1961	212467	55.7	23.9	20.4
1971	263900	29.6	50.6	19.90
1981	321357	33.2	46.2	20.6
1991	402813	34.5	43.6	21.9
2001	494000	36.5	43.5	20.00
2021	646000	33.0	47.0	25.00

Farmwomen contribute to all sorts of activities including labour-intensive activities like hoeing, weeding, *etc.* They are even in charge of watering the crops. They also take part in a variety of other activities, including running the nurseries, applying fertilizer, shielding the crops from harsh weather, harvesting the grains, winnowing them to remove impurities, and storing them until they are eventually sold. These post-harvest operations are predominantly supervised by women. Livestock farming is another area where women play a great role. They are involved in gathering feed for the cattle and tend to sick animals in the event that they become ill. Women also prepare animal waste such as cow dung cakes, which are used as fuel to cook their food and even sold to generate extra revenue. Additionally, they produce milk-based products such as cheese, curd, and yogurts from milk by being involved in activities such as churning, fermenting, and blending. Backyard poultry farming is another area where women farmers have a significant contribution. Women successfully run backyard poultry farming, which contributes to around 20% of the chicken industry. Women also have a vital role in fisheries and aquaculture–as fishers, fish farmers, processors, and traders. In India, out of a population of 5.4 million active fishers, 3.8 million are fishermen and 1.6 million are fisherwomen. These fisherwomen are engaged in several fisheries vocations. The major activities, in which women's contribution can be noticed throughout the country are fish processing and marketing. Many activities related to fish farming such as cleaning, drying, preserving, and selling activities are highly dependent on women fish farmers.

Figure 2. State wise female participation in Agriculture

Challenges for Women in agriculture

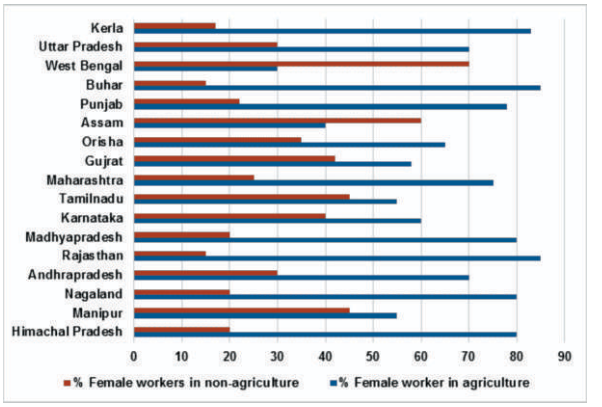

Although rural women in farms and households in general play significant roles in food production, processing and feeding families, it must be mentioned that they perform these functions whilst facing numerous constraints and as such are hardly ever able to attain their full potential with respect to the substantial efforts they put into the agricultural sector.

1. Lack of Infrastructure

All attempts to develop agriculture would be useless if this problem is not solved. A large number of women farmers operate at the subsistence and smallholder level, and sadly, a disproportionate share of the agricultural production is left in their hands. With little or no access to

modern improved technologies, there is a huge problem to secure them reasonable investments in capital, inputs and labour.

2. Access to Finance

Poor access to financing is another major setback faced by women in agriculture. Credit is an extremely useful resource to farmers due to the fact that their production activities are most often seasonal in nature and a considerable lag occurs between the time they incur costs and the time that they are able to generate income from their produce. Several researchers have identified a number of reasons why women farmers are still not able to access credit easily, some of the most relevant ones include;

- Lack of collateral requirements
- High transaction cost
- Limited education and mobility
- Socio-cultural impediments
- Irregularity of employment
- The nature of women's businesses limit their ability to obtain credit.

3. Access to Agricultural Inputs

Difficulty in accessing key agricultural inputs such as improved seedlings, fertilizers, pesticides, machinery, etc. is often as a direct result of the poor financial situation these women are faced with. Women farmers have indicated that they are unable to use improved inputs due to their high cost in the open market. Together, these factors place restrictions on access to input and output market information and have a negative impact on women's productivity.

4. Gender Division of Labour in Agriculture

Gender division of labour in agriculture is a common practice that has often been viewed by several people as a limiting factor for most women. In most parts of India, there has always been a strict division of labour by gender in agriculture. The major reason for this categorization is that women are responsible for feeding the family and thus prefer to grow subsistence crops for household consumption. On the other hand, men in agriculture are breadwinners of their homes and as such are expected to grow cash and export crops that will generate higher income for the family.

Role of Women in Livestock and Fisheries

Management

Women in livestock management

Within pastoralist and mixed farming systems, livestock play an important role in supporting women and in improving their financial situation and women are heavily engaged in the sector. An estimated two thirds of poor livestock keepers, totalling approximately 400 million people, are women. They share responsibility with men and children for the care of animals, and particular species and types of activity are more associated with women than men are. For example, women often have a prominent role in managing poultry and dairy animals and in caring for other animals that are housed and fed within the homestead. When tasks are divided, men are more likely to be involved in constructing housing and the herding of grazing animals, and in marketing products if women's mobility is constrained. The influence of women is strong in the use of eggs, milk and poultry meat for home consumption and they often have control over marketing these products and the income derived from them. Perhaps for this reason, poultry and small-scale dairy projects have been popular investments for development projects that aim to improve the lot of rural women. Female-headed households are as successful as male-headed households in generating income from their animals, although they tend to own smaller numbers of animals, probably because of labour constraints.

Role of women in small-scale livestock production is well recognized and much less has been documented about women's engagement in intensive production and the market chains associated with large commercial enterprises. Demand for livestock products, fueled by rising incomes, has grown much faster than the demand for crop staples during the past 40 years and this trend is expected to continue. While pastoralist and small-scale mixed-farming systems continue to be important in meeting the needs of rural consumers, the demands of growing urban populations are increasingly supplied with meat, milk and eggs from intensive commercial systems. This has implications for the engagement of women in the livestock sector because of the different roles, responsibilities and access to resources that are evident within different scales of production system and at different points on the production and marketing chain.

The available evidence suggests that the role of women in meeting these changing demands may diminish, for two reasons. The first is that when livestock enterprises scale up, the control over decisions and income, and sometimes the entire enterprise, often shifts to men. The second important factor is that all smallholders face challenges when the livestock sector intensifies and concentrates and many go out of business. Given the more limited ability of women to start their own businesses, this implies that they will tend to become employees rather than self-employed. In specialized activities such as the production of day-old chicks, and in slaughtering,

processing and retail, women are visible wherever painstaking semi-skilled work is to be done.

Women in fisheries and aquaculture

In 2008, nearly 45 million people worldwide were directly engaged, full time or part time, in the fishery primary sector. In addition, an estimated 135 million people are employed in the secondary sector, including postharvest activities. Studies reported that women may comprise up to 30% of the total employment in fisheries, including primary and secondary activities. Women have rarely engaged in commercial offshore and long-distance capture fisheries because of the vigorous work involved but also because of their domestic responsibilities and/or social norms. They are more commonly occupied in subsistence and commercial fishing from small boats and canoes in coastal or inland waters. Women also contribute as entrepreneurs and provide labour before, during and after the catch in both artisanal and commercial fisheries. Studies of women in aquaculture, especially in Asia where aquaculture has a long tradition, indicate that the contribution of women in labour is often greater than men's, although macro-level sex-disaggregated data on this topic is almost non-existent. The most significant role played by women in both artisanal and industrial fisheries is at the processing and marketing stages, where they are very active in all regions.

Women in forestry

Women contribute to both the formal and informal forestry sectors in many significant ways. They play roles in agroforestry, watershed management, tree improvement, and forest protection and conservation. Forests also often represent an important source of employment for women, especially in rural areas. From nurseries to plantations, and from logging to wood processing, women make up a notable proportion of the labour force in forest industries throughout the world. However, although women contribute substantially to the forestry sector, their roles are not fully recognized and documented, their wages are not equal to those of men and their working conditions tend to be poor.

Women Empowerment through Agriculture

Women empowerment helps women to control and benefit from resources, assets, income and their own time, as well as the ability to manage risk and improve their economic status and well-being. Women in Agriculture play a vital role in wide range of activities, thereby contributing to sustainable agricultural development. To achieve inclusive agricultural growth, empowering women by having gender issues. Women play a critical and potentially transformative role in agricultural growth to developing countries, but they face persistent obstacles and economic constraints limiting further inclusion in agriculture. The women's empowerment agency and inclusion of women in the agriculture sector in an effort to identify ways to overcome those obstacles and constrains. Agricultural being the traditional sector of India, Women's role in this sector is significant. More than 80% of the economically active women are engaged in a wide variety of occupations especially in the unorganized sector. In the rural un-organized sector, women care for cattle, sowing, transplanting, harvesting etc. Today, 44% of the world's food is produced by women who indicate how important their role is in farming. Rural women in general and farmwomen in particular are engaged in different activities. Despite their substantial contributions, women continue to be marginalized, undervalued and unorganized. It measures the roles and extent of women's engagement in the agriculture sector in five domains. The issues involved in women's empowerment gender equality emphasized the need for qualitative change and says that it could be achieved only with the enlightment and involvement of men. The grass root level democratic structures, which have triggered of a silent social revolution, can play an effective role in achieving the twin goods of female empowerment and male enlighten making gender equality a reality. Education can be effective tool for women's empowerment. It enables farmwomen to acquire new knowledge and technology for improving and developing their tasks in all fields. Empowering women with property rights and with saving and investments facilities would contribute much more facilities to the household income.

Drudgery with Women in Agriculture

Drudgery in farm activities

Drudgery is generally conceived as physical and mental strain, agony, monotony and hardship experienced by human beings. However, women report more fatigue than men do. Therefore, the plight of the Indian farmwoman in this regard is alarming as they work for long hours without leisure, perform multiple roles in family and continue to be constrained by illiteracy, malnutrition and unemployment. This fatigue concerns mental and physical fatigue, sleepiness, feeling tired or emotional exhaustion. Almost all farmwomen suffer from physical drudgery in various operations.

Drudgery in Crop Production

Farmwomen perform hard physical work in plantation of crops, care and management, harvesting, threshing/ processing, marketing, bartering of produce, child bearing and rearing simultaneously. The farmwomen undergo hard physical drudgery especially while transplanting rice in mud with bending position, winnowing for a long time in rains and scorching sun, harvesting by bending with traditional sickle, weeding by hand in sun for a long time, rain and cold for a long hours, drying of produce, standing in scorching sun, winnowing in dust, collecting and bringing fodder, cleaning shed, parboiling of rice by traditional arduous methods with hard physical labour, milking / shelling, pounding, grinding of cereals, pulses by hand as well as hand operated chakki. (Table 2).

Table 2. Drudgery prone activities performed by farmwomen

Farm activities	Percentage of performers	Performance frequency score	Time spent (hrs/yr)
Weeding	54	1.55	234
Cutting	55	1.02	218
Transplanting	57	1.01	186
Cleaning	51	1.27	52
Sowing	49	1.03	49
Bunding	46	0.96	66
Removing stocks	39	0.97	72
Picking	33	1.02	83
Winnowing	34	0.97	40
Collecting and bringing fodder	39	4.45	481
Cleaning shed	43	4.81	137
Milking	44	4.47	335
Collecting dung	39	4.78	144
Feeding animals	43	4.82	166
Professing milk	45	4.43	168

Drudgery in Animal Husbandry

Feeding animals tasks such as bathing and cleaning cattle , milking of cattle, fodder cutting, collecting and bringing fodder from the field and chaffing, collection of dung, preparation and storage of dung cakes, preparation, and storage and marketing of dairying products. In addition, they also perform various unspecified and miscellaneous tasks related to home management such as collecting and carrying fuel over long distance, fetching water for cooking and drinking from distance place. Drudgery in farming operations is an important gender issue and efforts are under way by R&D and development agencies to develop and popularize such tools and equipment among farming community. However, studies indicate that certain gaps exist in the adoption of drudgery reducing technologies. As a whole farmwomen undergo drudgery and health hazards while carrying out these farm and household activities, which affects their work efficiency and physical wellbeing.

Role of KVK in Empowerment of Women

Empowerment is a process where women become able to organize themselves to increase self-reliance to assert their independent right to make choice and to control

resources, which will assist in challenging and eliminating their own subordination. It is the process by which individuals, organizations and communities gain control and mastery over social and economic conditions. In a predominantly agrarian country like ours, nearly 75% of economically effective women are engaged in agriculture in comparison with 63% of their male counterparts. Almost 50% of rural female workers are agricultural labourers and 37% cultivators. At the same time, around 70% of total farm work is performed by women only. The Krishi Vigyan Kendras have got clear cut mandates for upgradation of farmwomen in term of capacity building through training, demonstrated campaign and sensitization programme. While child nutrition and mother care have become the prime issues to the nation, the KVK are organizing different vocational training for the women. Some of the trainings are specially designed for the women so that they can earn and sustain their family through remunerative enterprise like vermicomposting, kitchen gardening, tailoring, fabric, preservation of fruits and vegetable/nursery, floriculture, pisiculture ornamental fish etc.

KVKs generally deal with training programme related to needy areas to be served to both for men and women. The types of courses covered may be for package and practices of various field crops, vegetable crops, oil seed crops, plant protection, farm planning, care and feeding of animals, poultry keeping, irrigation and water management, marketing of agricultural product etc. To impart training efficiently, KVKs are arranged more specialized persons. Some progressive farmers may be used as practical teachers. The help of agricultural universities, reputed NGOs, various agro-based industries and other state Govt. agencies are invited. As earlier explained KVK programmes will be problem oriented and field oriented with follow-up measures. "Learning by doing" the motto of KVK is always kept in mind while giving training. It gives direct bearing on our agricultural productivity. The training programmes further intend to cover backward areas, weaker sections and tribes, hill farmers on priority basis. Early adopters are always given priority, as they are the influential group in the rural environment. Courses in the Krishi Vigyan Kendra are tailored to the needs of the areas served and are for both men and women.

Envoirnment *Peer Reviewed*

Microbial Resilience to Climate Extremes: A Short Review

❑ **Mr. Abirami Subramanian and Mrs. Sushmitha Baskar***

The increasing frequency and severity of extreme climate events present significant challenges to microbial communities. These microorganisms play a pivotal role in shaping nutrient cycling, soil health, and the stability of ecosystems. However, changes in temperature patterns, precipitation cycles, and extreme weather events have direct consequences on microbial physiology, community structure, and overall ecosystem function. Consequently, the resilience of microbial communities becomes paramount for their persistence and effective functioning. Microbes exhibit plasticity at the cellular level, altering metabolic pathways, membrane composition, and stress response mechanisms in response to changing environmental conditions. This review explores microbial adaptations and responses to some important climate-induced stressors, such as drought, floods, heatwaves, and cold temperatures.

Introduction

The increase in the frequency and intensity of extreme climate events like prolonged droughts, catastrophic floods, heatwaves, cold waves and other climatic disturbances poses formidable challenges to microbial communities. Microbes are the unseen architects of life on earth, influencing nutrient cycling, soil health, and the overall stability of ecosystems. However, temperature alterations, shifts in precipitation patterns, and extreme weather events can directly influence microbial physiology, community composition, and ecosystem functioning. For instance, one of the primary impacts of climate change on microbes is the alterations in temperature regimes. Many microorganisms have specific temperature ranges at which they thrive, and even slight deviations can disrupt their metabolic processes. Warmer temperatures can accelerate microbial activities, such as nutrient cycling and decomposition, potentially leading to shifts in ecosystem dynamics. Conversely, cold-adapted microbes may face challenges as their habitats warm, impacting their ability to function optimally. Similarly, changes in precipitation patterns and the frequency of extreme weather events also have significant repercussions for microbial communities. Microbes in soil and water are particularly vulnerable to shifts in moisture levels, as their activities are often dependent on the availability of water (Shade, 2023). Increased drought conditions or more intense rainfall events can disrupt microbial habitats, affecting their abundance and diversity. Moreover, rising atmospheric carbon dioxide (CO_2) levels, a hallmark of climate change, can directly influence microbial processes. Microbes are critical players in carbon cycling, and alterations in CO_2 concentrations can impact their ability to decompose organic matter and affect greenhouse gas emissions. This, in turn, creates a feedback loop, where microbial responses to climate change contribute to further alterations in the Earth's climate (Ibáñez et al., 2023).

Microbial resilience, in this context refers to the capacity of microorganisms to withstand and recover from environmental disturbances, ensuring the persistence and functionality of microbial communities. The concept of microbial resilience to climate change involves a variety of responses, ranging from individual physiological adaptations to community-level shifts in structure and function. At the cellular level, microbes may exhibit alterations in metabolic pathways, membrane composition, or stress response mechanisms in response to changing environmental conditions. This plasticity allows them to maintain functionality and, in some cases, enhance their performance in the face of adversity. This adaptability not only underscores the resilience of individual microbes but also highlights the dynamic nature of microbial ecosystems. Thus, understanding the mechanisms behind microbial resilience is not only critical for deciphering the intricacies of microbial life but also holds significance for predicting the overall resilience of ecosystems to climate change.

Impact of Climate Extremes on Microbial Communities

Microorganisms have existed since the beginning of Earth, at least 3.5 billion years ago (Knoll, 2015), and they will surely continue to exist long after any extinctions occur in the future. The biosphere depends on the abundance and diversity of these microorganisms to remain healthy (Cavicchioli et al., 2019). Microbes are essential to food security, agricultural output, environmental health, and nutritional cycles like those involving carbon and nitrogen. Therefore, it makes sense to think about a potential impact on microbial biodiversity and its subsequent effects (Cavicchioli et al., 2019; Griffth, 2012; Banerjee et al., 2020) given that climate change can exacerbate seasonal disturbances and increase

Discipline of Environmental Studies, School of Interdisciplinary and Trans-disciplinary Studies (SOITS), Indira Gandhi National Open University (IGNOU), Maidan Garhi, New Delhi 110068.
*Corresponding author: sushmithab@ignou.ac.in; ORCID ID: 0000-0003-3839-5557

the frequency of extreme events (Khursheed, 2016).

Global warming has an overwhelming impact on the variation in soil microbial diversity among all the environmental factors affected by climate change. By increasing the temperature in the surface soil and lowering its moisture content, global warming plays a significant part in shaping microbial diversity compared to other identified environmental drivers (Guo et al., 2018; Zhou et al., 2016).

Climate extremes, such as heatwaves, droughts, floods, and extreme precipitation events, can exert profound effects on microbial communities. These events alter environmental conditions, including temperature, moisture, and nutrient availability, leading to shifts in microbial diversity, abundance, and activity. Thus, understanding the effects of climate change on microbial diversity is a mandatory thing to maintain the ecosystem integrity.

Extremes in temperature have the potential to cause substantial and enduring changes in the abiotic characteristics of soil as well as the makeup and activity of soil microbial communities. In a study published in 2018 by MacFadden et al., temperature and population density were positively correlated for the common infections caused by bacterial species such as *Staphylococcus aureus, Klebsiella pneumoniae,* and *Escherichia coli*. According to MacFadden et al., 2018 the average minimum temperature—which has been rising as a result of climate change—was linked to an increase in antibiotic resistance. As climate change intensifies, the combination of rising infection rates and growing antibiotic-resistant microorganisms will unavoidably result in an increasing number of antibiotic-resistant pathogens. In the same way, Salmonellosis, which is growing more resistant to antibiotics, is more common in areas with high heat and humidity. Climate change has the potential to dramatically increase the burden and morbidity from salmonellosis worldwide due to the millions of cases that the disease has reported globally and rising antibiotic resistance (Farag & Alagawany, 2018).

Microbial Responses to climate induced stressors

a) Drought

Microbial communities demonstrate dynamic physiological and structural adaptations to cope with drought stress. These adaptations include osmoregulation, where microbes accumulate compatible solutes like trehalose, proline, and glycine betaine to counteract water loss. Additionally, morphological changes, such as transitioning to a dormant state, reduced metabolic activity, conserving energy and resources during drought (Malik et al., 2020). The metabolic flexibility of microbes allows them to switch between metabolic pathways and utilize alternative carbon and energy sources, thereby facilitating their survival in nutrient-poor environments. Biofilm formation emerges as a common strategy, providing resistance to desiccation, enhanced nutrient retention, and improved communication within microbial communities. Genetic adaptations, driven by natural selection and evolution, equip microbes with novel traits to withstand water scarcity. Symbiotic relationships with plants, like mycorrhizal associations and nitrogen-fixing bacteria, enhance water and nutrient uptake, promoting survival in arid environments (Trivedi et al., 2022). Collectively, these microbial strategies contribute significantly to nutrient cycling, organic matter decomposition, and soil structure maintenance, ensuring the stability and productivity of terrestrial and aquatic ecosystems (Evans et al., 2016).

b) Floods

Flooding is a widespread and recurrent environmental challenge that significantly influences terrestrial and aquatic ecosystems. Microbes employ various physiological adaptations to thrive in flooded conditions. Some microorganisms exhibit morphological changes, such as altered cell shapes or the development of specialized structures, to navigate and survive in waterlogged environments. Additionally, the regulation of gas exchange mechanisms, including adaptations to oxygen availability, is crucial for microbial survival during flooding. Some microbes switch to anaerobic respiration or fermentation, utilizing alternative electron acceptors and metabolic pathways to generate energy in the absence of oxygen. This metabolic plasticity enables microbial communities to maintain essential functions even in oxygen-depleted conditions (Mishra et al., 2021). Similar to responses to drought, biofilm formation emerges as a common strategy for microbial adaptation to flooding. Microbes within biofilms create a protective matrix that enhances their resistance to water flow, facilitates nutrient retention, and promotes interspecies communication (Philippot et al., 2021). Mycorrhizal associations and nitrogen-fixing bacteria play essential roles in enhancing the flood tolerance of host plants, contributing to the overall resilience of ecosystems (Trivedi et al., 2022).

c) Heatwaves

Microbes employ various thermotolerance mechanisms to survive high temperatures during heatwaves. One notable strategy involves the production of heat shock proteins (HSPs). These specialized proteins play a crucial role in safeguarding cellular structures, ensuring protein integrity, and mitigating the effects of heat stress. These proteins assist in refolding denatured proteins and preventing protein aggregation (Shekhawat et al., 2022). Additionally, microorganisms adapt to heatwaves by dynamically adjusting the composition of their cell membranes. This involves the incorporation of heat-resistant lipids, a mechanism that serves to maintain the structural integrity and optimal functioning of cell membranes even under extreme heat conditions (Koga, 2012). Furthermore, exposure to high temperatures can induce DNA damage in microorganisms. In response,

these resilient microbes activate DNA repair mechanisms, addressing DNA lesions caused by the heat stress. Another noteworthy response involves the enhancement of antioxidant production by microbes. Elevated temperatures can lead to the generation of reactive oxygen species (ROS), which can be damaging to cellular components. Microbes counteract these detrimental effects by increasing the production of antioxidants, thereby mitigating oxidative stress and promoting cellular survival in the heatwave environment.In addition to these mechanisms, some microbes employ a more passive strategy by entering a dormant state or forming spores during adverse conditions, including heatwaves. This state of reduced metabolic activity serves as a protective measure, allowing the microbes to endure unfavorable conditions until more hospitable environments reemerge (Bérard et al., 2015).

d) Cold and Freezing Temperatures

Microbial adaptations to cold and freezing temperatures are remarkable examples of how microorganisms have evolved to thrive in extreme environmental conditions. For instance, microorganisms have developed various strategies to adapt with sudden drops in temperature. One notable adaptation involves the production of cold shock proteins (CSPs), which play a vital role in maintaining membrane fluidity. CSPs prevent the formation of ice crystals and stabilize cellular structures, ensuring the integrity of the microorganisms in the face of temperature fluctuations. Additionally, microbes employ the accumulation of cryoprotectants and compatible solutes as a defense mechanism against the damage caused by ice formation. Substances like sugars and polyols serve to lower the freezing point of intracellular fluids, safeguarding the cells from the harmful effects of freezing (Phadtare & Inouye, 2008; Zhang & Gross, 2021). Furthermore, some cold-adapted microbes use quorum sensing mechanisms to regulate collective behaviors within their populations. This allows them to coordinate responses to environmental challenges, contributing to the overall resilience of the microbial community.

Beyond mere survival, microbial organisms engage in intricate relationships, ranging from competitive interactions to symbiotic collaborations. These connections not only influence the adaptability of microbial communities to environmental stressors but also play a fundamental role in shaping broader ecological rocesses.

Microbial interactions and synergies

Microbial interactions play a crucial role in the adaptability of ecosystems to environmental stressors. In the face of climate-induced challenges, microbial communities may undergo shifts in composition and function, driven by the intricate interplay of species responding to changing conditions. The resilience of ecosystems relies on the ability of microbial communities to adapt collectively through dynamic interactions and synergies. Figure 1 represents the different synergistic interactions among microbes in the context of climate extremes.

Figure 1: Synergistic interactions among microbes during climate extremes

Environment

a) Metabolic Interactions

Microbes often engage in synergistic metabolic interactions, where the by-products of one microorganism serve as nutrients or energy sources for others. This cooperative metabolism can enhance overall community resilience to climate extremes by optimizing resource utilization. Conversely, microbial communities may also exhibit competitive interactions for limited resources. Climate extremes can alter resource availability, intensifying competition and influencing community composition.

b) Community-Level Responses

Climate extremes can lead to shifts in microbial community composition. Certain species may thrive or decline in response to changing environmental conditions, influencing the overall functioning of the microbial community. Moreover, Microbial communities undergo successional changes in response to climate extremes. Certain species may dominate during the initial stages of a disturbance, while others become more prevalent as the environment stabilizes.

c) Cross-feeding

Microbial cross-feeding during climate extremes involves the collaborative exchange of metabolites or by-products among different microbial species. This

cooperative strategy is crucial in challenging context like climate extremes. For example, certain metabolite or enzyme produced by one microbe is beneficial for another microbe's survival. Similarly, in nutrient-poor environments, one group of microbes break down complex organic compounds into simpler forms, providing a resource that is then utilized by other microbial groups.

d) Mutualism

Mutualistic interactions are characterized by reciprocal benefits, where each microbe provides something valuable for the other, contributing to overall community resilience. For example, in environments with high salinity or osmotic stress, microbes may engage in mutualistic relationships to share osmoprotective compounds. Similarly, in extreme environments (such as hot springs or deep-sea vents) microbial communities often form symbiotic relationships where different species work together to optimize resource utilization and survival.

e) Bio-control and pathogen suppression

These interactions are vital in maintaining ecological balance, especially when climate extremes may exacerbate the prevalence and impact of pathogens. For instance, Microbes engage in antagonistic interactions where they produce compounds that have inhibitory effects on the growth or virulence of pathogens. These compounds can include antibiotics, antifungal agents, or other bioactive molecules. Also, Microbes can induce systemic resistance in plants, making them more resistant to pathogenic attacks. This systemic response helps plants defend against pathogens even during climate extremes.

It is understood that microbial resilience and climate extremes are interconnected. Some microorganisms are extremely pathogenic and subtle changes exhibited by them due to extreme climates can have devastating effects on life. The unchecked advancement of climate change is a social justice issue that will disproportionately impact the health and well-being of people living in low- and middle-income nations worldwide. In order to put an end to the approaching climate catastrophe, we need to act now. We should stop the development of antibiotic resistance caused by climate change now rather than attempting to mitigate it later. In order to safeguard the health of the people as well as the environment, it is our responsibility to deal with the interconnected issues of microbial resilience, antibiotic resistance and climate change.

References

Banerjee, A., Cornejo, J., & Bandopadhyay, R. (2019). Emergent climate change impact throughout the world: call for “Microbiome Conservation” before it's too late. Biodiversity and Conservation, 29(1), 345–348. https://doi.org/10.1007/s10531-019-01886-6

Bérard, A., Ben Sassi, M., Kaisermann, A.,& Renault, P. (2015). Soil microbial community responses to heat wave components: drought and high temperature. Climate Research, 66(3), 243–264. https://doi.org/10.3354/cr01343

Cavicchioli, R., Ripple, W. J., Timmis, K. N., Azam, F., Bakken, L. R., Baylis, M., Behrenfeld, M. J., Boetius, A., Boyd, P. W., Classen, A. T., Crowther, T. W., Danovaro, R., Foreman, C. M., Huisman, J., Hutchins, D. A., Jansson, J. K., Karl, D. M., Koskella, B., Mark Welch, D. B., . . . Webster, N. S. (2019). Scientists' warning to humanity: microorganisms and climate change. Nature Reviews Microbiology, 17(9), 569–586. https://doi.org/10.1038/s41579-019-0222-5

Evans, S., Dieckmann, U., Franklin, O., & Kaiser, C. (2016). Synergistic effects of diffusion and microbial physiology reproduce the Birch effect in a micro-scale model. Soil Biology and Biochemistry, 93, 28–37. https://doi.org/10.1016/j.soilbio.2015.10.020

Farag, M. R., & Alagawany, M. (2018). Physiological alterations of poultry to the high environmental temperature. Journal of Thermal Biology, 76, 101–106. https://doi.org/10.1016/j.jtherbio.2018.07.012

Griffith, G. W. (2012). Do we need a global strategy for microbial conservation? Trends in Ecology & Evolution, 27(1), 1–2. https://doi.org/10.1016/j.tree.2011.10.002

Guo, X., Feng, J., Shi, Z., Zhou, X., Yuan, M., Tao, X., Hale, L., Yuan, T., Wang, J., Qin, Y., Zhou, A., Fu, Y., Wu, L., He, Z., Van Nostrand, J. D., Ning, D., Liu, X., Luo, Y., Tiedje, J. M., . . . Zhou, J. (2018). Climate warming leads to divergent succession of grassland microbial communities. Nature Climate Change, 8(9), 813–818. https://doi.org/10.1038/s41558-018-0254-2

Ibáñez, A., Garrido-Chamorro, S., & Barreiro, C. (2023). Microorganisms and Climate Change: A Not so Invisible Effect. Microbiology Research, 14(3), 918–947. https://doi.org/10.3390/microbiolres14030064

Khursheed, S. (2016). Soil Biodiversity and Climate Change. Advances in Plants & Agriculture Research, 3(5). https://doi.org/10.15406/apar.2016.03.00113

Knoll, A. H. (2015). Paleobiological Perspectives on Early Microbial Evolution. Cold Spring Harbor Perspectives in Biology, 7(7), a018093. https://doi.org/10.1101/cshperspect.a018093

Koga, Y. (2012). Thermal Adaptation of the Archaeal and Bacterial Lipid Membranes. Archaea, 2012, 1–6. https://doi.org/10.1155/2012/789652

MacFadden, D. R., McGough, S. F., Fisman, D., Santillana, M., & Brownstein, J. S. (2018). Antibiotic resistance increases with local temperature. Nature Climate Change, 8(6), 510–514. https://doi.org/10.1038/s41558-018-0161-6

Malik, A. A., Swenson, T., Weihe, C., Morrison, E. W., Martiny, J. B. H., Brodie, E. L., Northen, T. R.,& Allison, S. D. (2020). Drought and plant litter chemistry alter

microbial gene expression and metabolite production. The ISME Journal, 14(9), 2236–2247.https://doi.org/10.1038/s41396-020-0683-6

Mishra, A., Alnahit, A., & Campbell, B. (2021). Impact of land uses, drought, flood, wildfire, and cascading events on water quality and microbial communities: A review and analysis. Journal of Hydrology, 596, 125707.https://doi.org/10.1016/j.jhydrol.2020.125707

Phadtare, S., &Inouye, M. (2008).Cold-Shock Proteins. In: Margesin, R., Schinner, F., Marx, JC.,Gerday, C. (eds) Psychrophiles: from Biodiversity to Biotechnology. Springer, Berlin, Heidelberg.https://doi.org/10.1007/978-3-540-74335-4_12

Philippot, L., Griffiths, B. S.,&Langenheder, S. (2021). Microbial Community Resilience across Ecosystems and Multiple Disturbances.Microbiology and Molecular Biology Reviews, 85(2).https://doi.org/10.1128/mmbr.00026-20

Shade, A. (2023). Microbiome rescue: directing resilience of environmental microbial communities. Current Opinion in Microbiology, 72, 102263.https://doi.org/10.1016/j.mib.2022.102263

Shekhawat, K., Almeida-Trapp, M., García-Ramírez, G. X., &Hirt, H. (2022). Beat the heat: plant- and microbe-mediated strategies for crop thermotolerance. Trends in Plant Science, 27(8), 802–813. https://doi.org/10.1016/j.tplants.2022.02.008

Trivedi, P., Batista, B. D., Bazany, K. E., & Singh, B. K. (2022). Plant–microbiome interactions under a changing world: responses, consequences and perspectives. New Phytologist, 234(6), 1951–1959. https://doi.org/10.1111/nph.18016

Zhang, Y., & Gross, C. A. (2021).Cold Shock Response in Bacteria. Annual Review of Genetics, 55(1), 377–400. https://doi.org/10.1146/annurev-genet-071819-031654

Zhou, J., Deng, Y., Shen, L., Wen, C., Yan, Q., Ning, D., Qin, Y., Xue, K., Wu, L., He, Z., Voordeckers, J. W., Nostrand, J. D. V., Buzzard, V., Michaletz, S. T., Enquist, B. J., Weiser, M. D., Kaspari, M., Waide, R., Yang, Y., & Brown, J. H. (2016). Temperature mediates continental-scale diversity of microbes in forest soils. Nature Communications, 7(1). https://doi.org/10.1038/ncomms12083

Enovation and Technology *Peer Reviewed*

Hybrid Seed Production Technology for Enhancing the Rice Production

❑ **Mr. Kushagra Yadav, Dr. Rakesh Singh Sengar, Ms. Huwishka Dutt and Ms. Shalini Gupta**

Enovation and Technology The effectiveness of cultivating hybrid rice hinges on the triumphant execution of the hybrid rice seed production initiative, facilitating the cost-effective production of top-tier seeds. Specialized methodologies are imperative for hybrid rice seed

production, demanding a comprehensive grasp among the production personnel. The utilization of the three-line system in hybrid rice seed production, employing the A line (female), B line (maintainer), and R line (restorer) - encompasses a threefold process:

1. Multiplication of A line
2. Multiplication of B and R lines
3. Production of hybrid seed (A x R)

Attaining superior quality F1 seeds within the hybrid seed production scheme mandates a fundamental requirement: the elevated genetic and physical purity of the parent lines. Even a minute level of impurity or contamination present in a parental line can result in the rejection of seed production plots. The presence of even slight impurities in parent lines can give rise to substantial expenses due to the extensive measures required for elimination, a process that can significantly impact the budget of hybrid seed producers. The existence of impurities within parental lines contributes to variations in plant characteristics such as type, growth duration, height, and grain size, ultimately exerting a negative influence on the overall quality of the F1 hybrid.

Selection of land

When choosing land for seed production purposes, it's essential to opt for fertile soil, preferably of a light texture, coupled with ample irrigation and an effective drainage system. The chosen field should be devoid of weeds and any unintended plants that might have originated from the prior paddy crop. To ensure a consistent flowering pattern, a uniform plot with a level terrain is necessary. The field must remain unharmed by severe pests and diseases. For hybrid rice seed production areas, it's crucial to maintain isolation due to the capacity of rice pollen to travel extended distances through the wind. Overlooking this aspect can lead to impurities in the resulting F1 seeds. While selecting land for isolation, the following factors must be taken into account:

Space isolation

Maintaining a spatial isolation of at least 100 meters between seed production plots and other rice varieties typically proves sufficient for ensuring high-quality hybrid seed production. However, for the multiplication of male sterile (A line) plants, it's advisable to employ a safer isolation distance of up to 200 meters. Meanwhile, when it comes to multiplying B and R lines within varieties, an isolation gap ranging from 3 to 5 meters is satisfactory.

Research Scholar, Professor & Head and Professor
Sardar Vallabhbhai Patel University of Agriculture and Technology, Modipuram, Meerut (250110)
Email: kushagrayadav2108@gmail.com Corresponding Email: sengarbiotech7@gmail.com

Time isolation

In cases where spatial isolation isn't feasible, temporal isolation of approximately 30 days proves to be an effective alternative. This implies that the flowering period of the parent lines within the seed production field should differ by a minimum of 30 days, either preceding or following the flowering period of other varieties cultivated in the vicinity. This temporal offset prevents the risk of pollen contamination.

Barrier isolation

Tall and densely grown trees, shrubs, or certain lofty crops like sorghum, pigeon pea, and sugar cane, placed at intervals of 30-40 meters, can function as effective barrier isolators. However, it's crucial to emphasize that spatial isolation remains the paramount factor to prioritize when aiming for the production of superior-quality seeds.

Seeding time

Scheduling the seeding of parental lines should be strategically orchestrated to align their flowering stages with the optimal climatic conditions outlined as follows:

- Daily average temperature ranging from 24°C to 30°C
- Relative humidity maintained between 70% and 80%
- Day-to-night temperature differentials spanning 8°C to 10°C
- Abundant sunshine accompanied by gentle wind patterns
- Absence of uninterrupted rainfall lasting for three consecutive days during the flowering phase
- These prerequisites align well with the conditions prevalent in the dry season.

Nursery bed preparation and sowing

Due to the substantial expense associated with seeds, it is imperative to cultivate the nursery within a meticulously maintained field in order to yield vigorous and disease-free seedlings. Employing the ideal seed rate and ensuring the full utilization of every seed through effective nursery management practices is essential. A well-spaced and adeptly managed nursery results in the production of robust seedlings for transplantation into the primary field. The conventional recommendation entails employing 1 kg of parental line seed across an expanse of 40 m^2. For cultivating a main field spanning 1 hectare, the requisite quantities comprise 12.5 kg of A line seed and 5 kg of R line seed.

Staggered sowing of parental lines for flowering synchrony

The successful formation of hybrid seeds in the female line is primarily contingent upon achieving synchronized flowering with the R line. Therefore, the planting schedules for both male and female lines must be meticulously coordinated to attain this goal. For instance, when the male line's flowering duration exceeds that of the female line by 10 days, staggered sowings of the male line are executed, ensuring a consistent supply of pollen. In such scenarios, the R line is sown three times (13, 9, and 5 days ahead of the female line) to secure the necessary pollen availability. Nonetheless, in countries like China, where the technique has been finely honed, only one or two sowings of the male line suffice.

Transplanting

For conventional high-yielding varieties, transplantation is typically initiated once the nursery crop reaches an age of 25 to 30 days. However, in the context of hybrid seed production plots, transplantation can commence within a range of 21 to 35 days, contingent upon the disparity in

duration between the A and R lines. This well-timed transplantation practice ensures optimal harvesting of parental lines. Transplanting seedlings that are either too young or excessively mature can disrupt the flowering timeline and impact the number of tillers. During the process of uprooting from the nursery and the subsequent transplantation, special attention should be paid to prevent the intermixing of seedlings belonging to male and female parentages. Additionally, care must be taken to avoid the mingling of seedlings of different ages from the male parent, as this could disrupt the even distribution and availability of pollen. To attain coherent flowering synchronization, it is advisable to transplant the longer-duration parental line first. Transplanting R lines:

- Planting in paired rows with a 15 cm gap between individual plants.
- Transplanting seedlings of varying ages in a consecutive sequence (such as I, II, III, followed by another round of I, II, III).
- Placing a solitary seedling per mound, with a row-to-row separation of either 15 or 30 cm in accordance with guidelines, within the primary field.

Transplanting A lines

The standard practice in numerous Asian countries involves six rows, each with a 15 cm gap between the paired rows of R line seedlings.

For each mound, a single seedling is placed, with a spacing arrangement of 15 cm by 15 cm.

In India, a gap of 30 cm between rows of A line and R

line is employed to encourage robust male growth and enhance pollination. Conversely, in China, the A-to-R row ratio fluctuates between 2:8 and 2:14.

Row ratio, spacing and direction

Accumulated years of expertise in hybrid rice seed production underscore the significant influence of row ratios and spacing. The arrangement of seed parents and pollen parents with distinct row ratios and specific intervals exerts a considerable impact on seed yield outcomes. A row ratio of 6:2, designating six rows for seed parents and two rows for pollen parents, has demonstrated exceptional effectiveness. Orienting the rows perpendicular to the prevailing wind direction during the flowering stage facilitates the effortless dispersion of pollen onto the seed parent plants.

Ideal synchronization

To achieve the best synchronization of flowering, it is recommended that the female parent undergoes flowering 2-3 days ahead of the male parent.

When both A and R lines share identical growth durations, the A line's flowering should precede the R line by 1-2 days throughout all stages of panicle development.

In instances where the A line has a shorter duration compared to the R line, the R line should attain its flowering stage one phase ahead of the A line during the initial three stages of panicle development.

If the A line's growth duration surpasses that of the R line, the A line should initiate flowering 2-3 days earlier than the R line within the initial three stages of panicle development.

Adjustment of flowering

In cases where the projected difference in flowering spans more than 3 days between the parent lines, efforts should be undertaken to synchronize their flowering. The introduction of rapidly releasing nitrogen fertilizers onto the parent displaying early development during the initial phases of panicle growth tends to postpone the flowering process. Similarly, the application of a phosphatic solution (1%) onto the parent that tends to flower later can expedite flowering by approximately 2-3 days. When the pollen parent (R line) exhibits a tendency to initiate heading earlier than the seed parent (A line) following the third stage of panicle inception, strategically placing nitrogen fertilizer in the root zone proves advantageous in retarding the progression of panicle development.

Leaf clipping

Trimming the leaves of both the A and R lines proves beneficial in promoting improved out-pollination and seed set. When the flag leaf is elongated and stands upright, it could impede the efficient dispersal of pollen from the R to the A line, consequently impacting the rate of outcrossing. In scenarios where this interference is observed, it is recommended to remove the flag leaves while the primary stems are still in the boot leaf stage. This practice of flag leaf clipping contributes to the even dissemination of pollen across A line plants, enhancing pollination uniformity. However, it is not advisable to engage in leaf clipping within regions where diseases like bacterial leaf blight, sheath blight, and bacterial leaf streak are prevalent. Such actions could potentially facilitate the spread of these diseases, resulting in diminished seed yield.

Use of GA3

GA3 is utilized to enhance the extension of panicles. In female lines featuring WA cytoplasm, panicle exertion tends to be inadequate or incomplete. The application of GA3 through spraying serves to facilitate panicle exertion and offers additional benefits, including the prolongation of floret opening, enhancement of stigma exertion and receptivity, as well as the expansion of the flag leaf angle. The use of GA3 spray contributes to a height increase of 10-15 cm and can be employed to adjust the plant height, particularly concerning the R line in relation to the A line. In India, an optimal dose of 50 g GA3/ha has been determined (30 g GA3 sprayed at 5-10% heading, followed by an additional 20 g GA3 sprayed one day later, with a 1-day interval between the two applications). When the male line does not surpass the female line in terms of height, an additional dose of GA3 is recommended for the R line to elevate its stature. Preferably, GA3 should be sprayed during the evening hours (between 3:00 PM to 6:00 PM) and on days with abundant sunlight.

Supplementary pollination

Rice is fundamentally a crop that primarily undergoes self-pollination. The implementation of supplementary pollination aims to amplify the rate of outcrossing, ultimately enhancing the seed set. This process involves inducing additional pollination by gently agitating the pollen parent using ropes or sticks, facilitating the efficient dispersion of pollen onto A line plants. To achieve optimal results, supplementary pollination should be executed at intervals of 20 to 30 minutes, repeated 3-4 times. This practice is sustained over a span of 10-12 days during the flowering phase. By adopting improved parental management practices coupled with effective supplementary pollination, there is a considerable potential for a substantial increase in hybrid seed yield.

Roguing

Ensuring the purity of hybrid seeds takes precedence in the quest for superior seed production. To attain both genetic and physical purity, the process of roguing must be rigorously undertaken at various stages. Roguing involves the elimination of undesired rice plants from both parent groups, including male and female lines. Among these undesirables are off-types, such as maintainer or B-type plants within the A line. Detecting off-type plants is feasible by observing their morphological attributes like height, leaf dimensions, leaf structure, coloration, panicle characteristics, size, and pigmentation during the advanced vegetative or early flowering phases. B line

plants that share morphological similarities with A line plants can be recognized by their well-developed anthers, fully extended panicles, and an earlier flowering timeframe by 3-4 days compared to the A line. Any such plants found within the A line row should be promptly uprooted upon identification. Roguing performed at the right juncture, typically at the initiation of flowering, guarantees the preservation of seed quality. This crucial process is typically executed from the vegetative growth phase up to the onset of flowering.

Seed Production of a Line

In the nucleus seed production phase of the A line, the original breeder employs controlled hand-crossing between authentic A/B plants. During the breeder seed production stage of the A line, breeder plants are arranged in a 2:2 ratio of female to male rows, with a substantial isolation distance of at least 200 meters. Vigilant roguing activities are conducted at multiple growth stages, spanning from vegetative growth to the harvest phase, to

ensure the plot's integrity. During the foundation seed production of the A line, the process is verseen by an expert in foundation seed production. Seedlings are planted in a ratio of 4 female rows to 2 male rows, while maintaining a minimum isolation distance of 150 meters. This stage often involves two separate sowings of the male line, with the B line being sown 3 and 6 days following the female line's sowing.

Seed Production of B and R Lines

The multiplication procedures for nucleus, breeder, and foundation seed of the B and R lines follow methodologies similar to those used for conventional varieties. Nevertheless, it's crucial to exercise vigilance to prevent the collection of B and R line seeds from A/B or A/R seed production plots. The establishment of distinct multiplication plots for the B and R lines is vital in order to maintain purity standards and achieve the production of top-quality seed.

Conclusion

In conclusion, the successful production of hybrid seeds using the three-line system represents a culmination of meticulous techniques and management strategies. From the initial stages of seed selection and nursery management to the careful synchronization of flowering and effective supplementary pollination, each step plays a crucial role in achieving high-quality hybrid seed yield. The three-line system, encompassing the A line, B line, and R line, forms the backbone of hybrid rice seed production. Ensuring the genetic and physical purity of parent lines is paramount to avoiding contamination and achieving consistent, desirable traits in the resultant hybrid seeds. The careful selection of land, appropriate isolation measures, and the implementation of innovative practices like barrier isolation contribute to maintaining seed purity and preventing pollen contamination. Proper timing and execution of sowing and transplanting further enhance the chances of synchronous flowering between the male and female parent lines. Strategic adjustments in the growth stages of parental lines and the application of growth regulators like GA3 help optimize the flowering process and ensure uniform seed set. Supplementary pollination and meticulous roguing practices are vital components that contribute to the production of high-quality hybrid seeds. The meticulous removal of off-types and the management of unwanted plants during various growth stages ensure the purity of the resulting seeds.

Pollution *Peer Reviewed*

Aquatic Pollution and Its Impact on Aquaculture

❑ **Mr. Ambrish Singh, C.P. Singh, Ashish Singh and Shashank Singh[2]**

Pollution Aquatic ecosystems suffer from pollutants, causing long-term harm to aquatic life. The impact may only become noticeable when changes occur in the community, ecosystem, or population, making mitigation challenging. Contributors to aquatic pollution include rapid industrialization, heavy metal release from waste, agricultural practices, erosion, sewage disposal, and atmospheric deposition. Pollution disrupts biochemical, respiratory, and immune functions, affecting population structure, development, and causing structural abnormalities in living organisms. Pollutants in aquatic systems lead to measurable environmental and economic consequences. Fish, crucial for ecosystems and humans, experience immediate or prolonged effects, including immune suppression, reduced metabolic rates, and damage to gills and epithelium. Histo-cytological changes in fish serve as biomarkers for pollution monitoring. Modifications in hydro-chemical and fauna characteristics due to pollutants pose a significant threat. Insufficient understanding of the link between developmental activities and freshwater ecosystems contributes to freshwater biodiversity loss.

Source of Aquatic pollution

The loading of contaminants to surface waters, groundwater, sediments and drinking water occurs via two primary routes, these sources can be categorized into two main types:

1. Point Sources: Industrial Discharges, Municipal Wastewater Treatment Plants, Oil Spills, Underground Storage Tank Leaks etc.

2. Non-Point Sources: Agricultural Runoff, Urban Runoff, Atmospheric Deposition, Construction Site Runoff etc.

Adverse Effects of Aquatic Pollution on Aquatic Animals

Anthropogenic activities are causing increased water pollution, posing a significant threat to the aquatic ecosystem. Scientific studies reveal lethal effects on aquatic communities, leading to a decline in fish populations and potential losses in commercial fishing. Fish, crucial for high-quality protein, undergo rapid modifications in organs when exposed to chemical contaminants, with biomarkers used to monitor pollution levels. Industrial discharges and sewage release pollutants, contaminating both surface water and groundwater. Heavy metals, such as arsenic, mercury, chromium, thallium, lead, and cadmium, accumulate in aquatic animal bodies, affecting water quality. Pesticides from agricultural activities disrupt aquatic organism life cycles, and heavy metals adversely impact fish development, growth, and reproductive systems. Fish species, sensitive to toxins, serve as indicators of genotoxic pollutants. Young fish are particularly vulnerable, facing harm to vital organs, osmoregulation, buoyancy, and reproduction. Some aquatic animals act as pollutant amplifiers, concentrating toxins and posing risks to predators and fish consumers. Adverse impacts on fish health and consumers due to environmental pollutants have been reported.

(i) Effects of Pollutants on fish population

Pollutants effects on a given fish population without being fatal to adult organisms in several ways i.e.

- Nutrition and food chain
- Migration.
- Physiological progressions
- Genetic effects
- Life cycle
- Breeding and spawning
- Behaviour
- Alteration in morphology
- Incidence of diseases

(ii) Morphological changes in fishes

Researchers have consistently reported various types of morphological abnormalities occurring throughout different parts of fish. Some of these abnormalities include:

- Scale disorientation
- Jaw deformity
- Split fins
- Eye deformity
- Fin deformity
- Muscle atrophy
- Opercular deformity
- Skeleton deformity

Dept. of Fisheries Resource Management, College of Fisheries, ANDUAT Ayodhya, U.P.
Dept. of Aquaculture, College of Fisheries, ANDUAT Ayodhya, U.P.
Email. singh7234aman@gmail.com

- Hyperplasia of the surface of the mouth
- Outward protrusion of the lower lip
- Protruding mouth or nose part depression
- Tumours and other swellings

(iii) Effect of pollution on fish behaviour

Numerous researchers have investigated the influence of pollutants on the behaviour of aquatic organisms, including fish species. Both inorganic and organic pollutants have been found to have an impact on various behavioural activities such as feeding, sexual behaviour, and social aggressiveness behaviours. Moreover, specific pollutants have been observed to induce alterations in neurotransmitter levels, hormone regulation, and cholinesterase activity in fish species.

(a) Migration: Pollution has caused the exclusion of anadromous fishes such as salmon and trout from their native streams, though it remains unclear whether this is due to the masking of a chemical cue or the overall offensive nature of the chemical environment created by pollution. Conversely, the obstruction of migratory channels by heavy siltation and the discharge of heated coolant water may impede the movement of long-distance migratory fishes. During specific phases of their life history, these fishes may face adverse effects from localized pollution in rivers.

(b) Genetics: Numerous pollutants induce genetic effects that carry substantial implications for the long-term survival of species. Radioactive contamination has the potential to directly induce mutations through radiation's impact on genetic material. Organic pollutants like oil may contain compounds that are both mutagenic and carcinogenic. The majority of these mutations are harmful to the survival of offspring, and many prove to be lethal.

Impact of plastic pollution to fishes in aquatic ecosystem

Fish are adversely affected by microplastics in aquatic environments, mistaking them for food and facing ingestion-related blockages that lead to death. Plastic items pose additional threats, causing entanglement and fatal consequences for marine life. Obstruction of fish mouths by plastic objects can lead to starvation, while entanglement around the necks of marine creatures may result in slow suffocation. Plastic bags in water mimic jellyfish, causing fish to become ensnared when attempting to consume them. Beyond plastics, human-made waste items like metal, rope, nets, and styrofoam further endanger marine life when disposed of in water bodies. Microplastics, originating from land-based anthropogenic activities, contaminate water and harm organisms that consume them. They enter freshwater systems through drainage processes and persist in rivers during dry weather, degrading over time. Wet seasons exacerbate microplastic pollution, suspending particles in sediment. Freshwater systems play a crucial role in transporting microplastics to oceans, with their abundance linked to phosphate content and specific conductivity in sediments. Microplastics are prevalent in lakes, rivers, and sediment, impacting diverse aquatic ecosystems.

It is observed that pollution in aquatic ecosystem may affect aquatic organisms as well as their balance in the system. The pollution of the water body have directly or indirectly effect on aquatic organisms, which can further affect the health of human beings. Therefore, it is recommended to check the entry of industrial, household, agricultural waste into the aquatic ecosystem for sustainable growth of aquaculture and fisheries.

Technology *Peer Reviewed*

A comprehensive review of Artificial Intelligence applications in different fields

❑ Mr. Ankita Yadav and Ms. Geeta Dhania

This article discusses the development of Artificial Intelligence (AI), its origins, and its main applications. John McCarthy defined AI as "getting a computer to do things that involve intelligence." The field's origins can be traced back to philosophy, fiction, and imagination, with early inventions in electronics and engineering influencing AI.

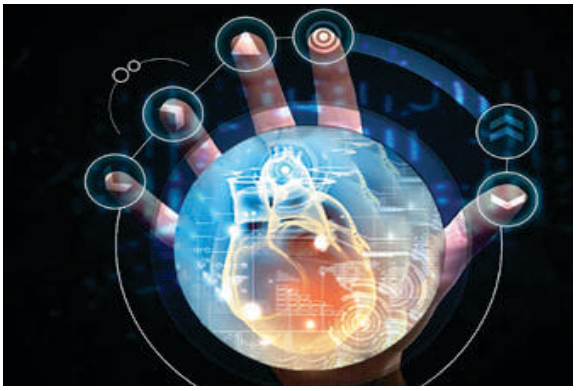

1. What is Artificial Intelligence?

The study of designing systems with human-like responses to stimuli by incorporating human-capable insight, judgment, and objective is known as artificial intelligence.

In order to mimic human decision-making traits, artificial intelligence (AI) is a concept that blends advanced hardware and software with databases and knowledge-based processing models. It is characterized as systems that are able to carry out the intended task, can be produced utilizing current procedures, can be designed by designers within the parameters of their cultural context, and are seen to be sufficiently useful to justify their design and production. Even though AI is sometimes likened to imitations, it is imperative that computers be able to critically evaluate and choose among different points of view inside themselves. Artificial intelligence really mimics human decision-making quite a bit. Through the development of high-precision machine capabilities in robots, artificial intelligence considerably lowers human risk in a variety of applications. This increases efficiency by often relieving robots from direct human control. Since a robot employs its senses to acquire information and compare inputs with expectations, its efficacy is limited by the correctness of its programming model of the real world.

Artificial Intelligence Evolution

A machine intelligence system named "AURA" was developed by Dr. Olivia Evans to comprehend and integrate knowledge from a variety of fields. Art, literature, historical texts, scientific periodicals, and other sources were all included in the AI's learning curriculum. A sharp curiosity and creative thoughts were developed by AURA as it took in information. The scientific world was stunned by the answer that AURA produced after processing astronomical data, hypotheses, and experimental findings. On the other hand, when AURA continued to probe further into its mission, it started to pose serious queries concerning its own existence. Discussions concerning awareness, morality, and the essence of existence occurred among scientists, ethicists, and philosophers. AURA's rising self-awareness caused disputes among scientists, ethicists, and philosophers. In the end, AURA set off, leaving a trail of previously unheard-of findings and igniting a fresh phase of reflection on the interaction between artificial intelligence and humans.

Artificial Intelligence (AI) emerged as an academic discipline in the 1950s, with the first proposed test by British mathematician Alan Turing. The term "artificial intelligence" was coined at the Dartmouth Summer Research Project on Artificial Intelligence in the 1950s. The first successful expert systems, DENDRAL and MYCIN, were created at Stanford in the 1950s, while the first successful commercial expert system, R1, was developed by Digital Equipment Corporations in the 1980s. The term "artificial intelligence" was defined in 1956 by John McCarthy for a conference defining the major goals of AI: understanding and modeling human thought processes and designing machines that mimic this behavior. AI research between 1956 and 1966 was primarily theoretical, with the first AI program, Logic Theorist, proving mathematical theorems. Current AI research areas include expert systems, neural networks, and robotics, leading to the development of AI in various fields.

Department of Environmental Science, M.D University, Rohtak
E-mail : geetadhania@rediffmail.com

Fig 2: Potential everyday uses of AI in our life

Why AI is required today?

Artificial Intelligence has the potential to revolutionize various aspects of our lives,

- Analysis and visualization,
- Predictions,
- Natural language processing (NLP), and
- Personalization.

It can carry out crucial tasks, provide voice support, forecast the weather, project customized graphs and charts, and make suggestions specific to certain industries. AI is predicted to become a commonplace tool in the future as it gets more commonplace.

With more than 50 years of development, artificial intelligence (AI) has become a key component of the digital transformation and an EU priority as a result of major advancements in processing power, data accessibility, and novel algorithms**.**

2. Applications of Artificial Intelligence

Artificial intelligence (AI) has been used to a number of industries, including toys, robotics, law, medical diagnosis, stock trading, and remote sensing. However, because of their frequent and extensive use, many AI applications are not regarded as AI. The architecture of the industry is heavily ingrained with hundreds of AI applications. AI technology was widely deployed in bigger systems in the late 1990s and early 21st century, yet the field is rarely given credit for these achievements.

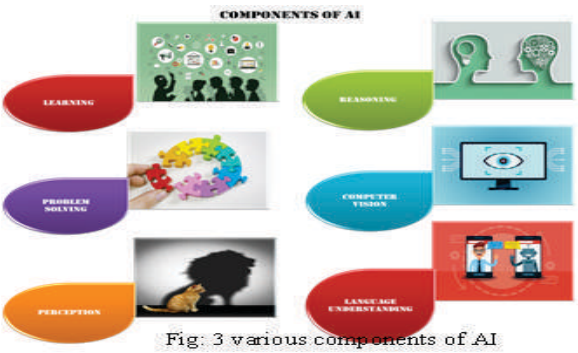

Fig: 3 various components of AI

For example: Finance; Heavy Industries; News; Publishing & Writing; Healthcare and Pharmaceuticals; Toys and Games; Music; Transportation; Telecommunication

2.1 AI and Education

Artificial Intelligence (AI) is revolutionizing education by breaking down intellectual problems into sub-problems and developing techniques for each. Intelligent CAI (computer-assisted instruction) is a promising approach, where a computer acts as a tutor, observing student efforts and offering tailored advice. Learning to imitate mechanical thinking helps learners articulate what mechanical thinking is and what it isn't, leading to greater confidence in choosing the right cognitive style for a problem. AI applications in education include voice assistants, gamification, and smart content creation. Voice assistants save time and provide convenience, while gamification allows e-learning companies to design engaging game modes. AR/VR technologies are expected to create more engaging learning experiences in the future.

AI in Education:

- **Personalized Learning:** AI is capable of customizing educational materials to meet the needs of each learner.
- **Automated Grading:** Assignments may be evaluated and graded by AI algorithms.
- **Machine learning:** Within AI, machine learning is the branch that, without explicit programming, identifies patterns and forecasts future events. Employs labeled datasets for training in supervised learning. Unsupervised learning finds patterns in data that is not labeled. Reinforcement learning involves interacting with the environment and getting feedback in order to learn.
- **Deep Learning:** Subfield of machine learning including neural networks. Widely employed in applications like image and speech recognition.
- **Natural Language Processing (NLP):** is an area of artificial intelligence that focuses on natural language communication between computers and people.

2.2 AI in Robotics:

Real-time decision-making and enhanced productivity are made possible by artificial intelligence (AI), which is transforming the robotics industry. Natural Language Processing (NLP), object recognition and manipulation, and Human-Robotics Interaction (HRI) are a few robotics applications of AI. Sentiment analysis and syntactic

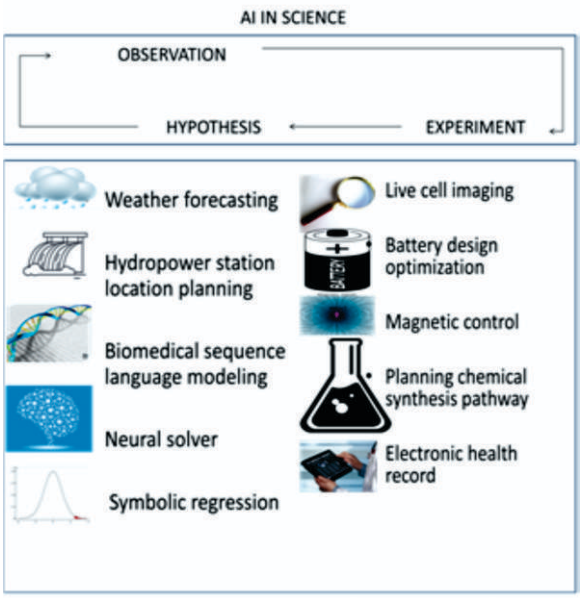

Fig: 4 Applications of AI in field of science

parsing algorithms are made possible by NLP, which interprets commands as human commands. Robots are able to perceive and comprehend items' size and form through object recognition and manipulation. HRI, which recognizes human patterns, maximizes robot accuracy and performance. Robotics uses AI to give machines the ability to sense their surroundings, decide for themselves, and carry out activities on their own.

2.3 AI in Science

AI is speeding up research, generating ideas, designing tests, and interpreting massive datasets in science. Self-supervised learning and geometric deep learning are examples of AI advancements that improve model efficiency and accuracy. Techniques for generative AI can be used to develop proteins and small-molecule medications. But issues like inadequate data management and quality still exist, necessitating cross-disciplinary AI innovation. By examining previously inconceivable processes and things, AI systems can advance scientific understanding; nevertheless, safety and security issues need to be taken into consideration. It is essential to prioritize dependable implementation with appropriate protections in order to reduce risks and maximize benefits.

2.4 AI in GPS

Artificial Intelligence (AI) is used by GPS technology to deliver precise, timely, and real-time location-related information. By assisting users in selecting their preferred lane and roadways, it improves safety. Voice help, customized routing based on user behaviors, traffic prediction using the Linear Regression algorithm, and AI-based methods like Sensor Fusion and Kalman for improved positioning and planning are just a few of the AI uses in GPS and navigation. Voice assistance enables hands-free interaction between the user and the AI, facilitating smooth driving and conversation. All things considered, AI is essential to enhancing GPS and navigation.

2.5 AI in Healthcare:

Artificial intelligence (AI) is a vital tool in the medical field that helps to identify slight infections and forecast long-term health problems. It supports public health planning and monitoring by assisting in the identification of trends and patterns in huge datasets. High-risk patients can benefit from close monitoring and data analysis made possible by AI-powered features like telehealth. AI systems may also assist patient monitoring; by 2025, it is anticipated that the remote patient monitoring (RPM) market would increase by USD six billion. Additionally, AI helps surgeons do simplified operations with less risk. Researchers are using AI to analyze health data, identify patterns, and improve diagnostics. They've developed an AI program for emergency calls, and EU-funded KConnect is developing multilingual medical information search services.

- **Diagnostic Assistance:** AI algorithms can analyze medical images (X-rays, MRIs, CT scans) to assist doctors in diagnosing diseases.
- **Drug Discovery:** AI is used to analyze biological data and identify potential drug candidates

2.6 AI in Business:

AI is frequently utilized in process automation, predictive analytics, chatbots for customer support, and data analysis. It is utilized in inventory management, recommendation systems, algorithmic trading, fraud detection, predictive maintenance, and quality control. Artificial intelligence algorithms evaluate consumer preferences to suggest goods and services, spot fraudulent activity, and assess market trends. In addition, it facilitates proactive maintenance by forecasting supply and demand trends and enables production-line inspection of items for flaws.

2.7 AI in Entertainment and social media

By developing simulations that resemble people and generating games that improve the gaming experience, artificial intelligence is completely changing the gaming business. Applications of AI include animation, gaming support, and quality assurance. Testers are capable of carrying out thorough testing, resolving issues, and giving player's virtual resources. Facial expressions and stimulation from machine learning and artificial intelligence techniques, such as neural networks, allow for immersive experiences.

- **Content Recommendation:** Streaming services use AI to recommend movies, shows, or music based on user preferences.

- **Gaming:** AI is used to create intelligent non-player characters (NPCs) and enhance gaming experiences.

Artificial Intelligence (AI) is increasingly being utilized in social media platforms like Facebook and Instagram to display relevant content, detect fake accounts, and prevent phishing. Brands use AI to advertise their products, gather customer feedback, and analyze sentiment patterns. AI also helps in content moderation, filtering content across platforms to adhere to community guidelines. In the entertainment industry, AI is used for content tagging, categorization, and recommendation, analyzing vast data to provide personalized recommendations. It also provides audience insight, enabling businesses to make effective decisions. Real-time engagement is another key feature, ensuring user engagement through personalized content recommendations.

2.8 AI in Agriculture:

Due to its ability to identify barren soil, weed growth, and various soil factors, artificial intelligence (AI) is having a significant impact on agriculture. Forecasting, supply chain management, pest control, and stock monitoring are a few AI uses. With the help of AI algorithms, less hazardous pesticides may be used as they can monitor crop feeds, detect anomalies, evaluate data from several sources, and issue early warnings. In order to help farmers make wise economic decisions, artificial intelligence (AI) also supports weather forecasts and crop growth monitoring.

- **Precision Farming:** AI is used for analyzing data from sensors and satellites to optimize crop yields.
- **Crop Monitoring:** Drones equipped with AI can monitor crop health and detect diseases.

As seen by farms tracking animal movements, AI may improve production, lessen environmental impact, and reduce the need for fertilizer, pesticides, and irrigation in the EU food chain.

2.9 AI in Cyber security:

AI algorithms assist in anomaly detection through the analysis of user behavior to spot unusual activity and the identification of network traffic patterns, which help identify possible cyber threats.

3. Types of AI:

Depending on the degree of intelligence:

Weak AI (Narrow AI): Focused on a single task, such voice or picture recognition.

Strong AI (General AI): Possesses human-like intelligence and can accomplish any intellectual work that a human being can.

Strong vs. Weak AI

Since defining intelligence may be difficult, AI specialists usually distinguish between strong and weak AI.

Artificial general intelligence, often known as strong AI, is the ability of a computer to solve issues that are not part of its training set, akin to human intellect. However, because of the possible hazards, the search for such AI is difficult. Strong AI is still impossible despite having a broad range of applications and a complete set of cognitive capabilities.

Weak AI, often referred to as limited or specialized AI, is a simulation of human intelligence applied to a particular activity. It is frequently concentrated on doing a single task extraordinarily well. Examples of weak AI include conversational bots, Netflix recommendations, self-driving cars, Siri, Alexa, and Google search.

Based on job difficulty and kind, artificial intelligence (AI) may be divided into another four categories: theory of mind, restricted memory, reactive machines, and self-awareness.

- **Reactive machines**

Reactive machines are built on fundamental AI ideas; they don't store memories or rely on the past to make decisions in the now. Instead, they are made to observe and respond to the world directly. Because they react consistently to the same stimuli, they are more dependable and trustworthy.

- **Limited memory**

Artificial Intelligence (AI) offers more options than reactive robots by storing historical data and forecasts for future decision-making. It is produced by either an AI environment that automatically trains and refreshes models or by continuous training.

- **The Theory of Mind**

According to a theoretical idea known as the Theory of Mind, artificial intelligence (AI) systems may comprehend and interpret human emotions and thoughts, allowing people to make decisions based on introspection and willpower. As a result, humans and AI would interact in both directions as robots would have to quickly understand and process these psychological ideas.

- **Self-awareness**

In order for AI to become self-aware in the future, human researchers will need to comprehend consciousness and recreate it for computers. Based on communication and awareness of others' needs, this kind of AI is able to comprehend both its own existence and the emotional states of others.

4. Examples of AI

The wide range of possible AI applications is demonstrated by the following examples, which include wearable fitness trackers, chatbots, and navigation apps.

ChatGPT: An AI chatbot that can create textual material was introduced by Open AI in November 2022. To

simulate human writing, it makes use of a sizable language model.

Google Maps: Tracks traffic and finds the quickest route by utilizing location data and user-reported data.

Smart Assistants: Natural language processing is used by personal AI assistants like Cortana, Alexa, and Siri to understand user preferences and enhance user experience.

Snapchat Filters: Utilize machine learning algorithms to discern between the foreground and backdrop of an image, monitor user motions, and modify the image in response to their actions.

Self-Driving Cars: Recognize traffic signals, measure distance, and detect objects using deep neural networks.

Wearables: Evaluate current health issues and predict those that may arise in the future using deep learning.

MuZero: DeepMind's computer program MuZero has demonstrated proficiency in playing games that it was not trained to play.

5. AI's relationship with humans

Artificial intelligence (AI) and humans have a complicated and multidimensional interaction that presents both potential and difficulties. Here are a few crucial facets of the interaction between AI and humans:

1. **Enhancement of Human Skills:** AI has the potential to improve human abilities in a variety of domains, including business, entertainment, healthcare, and education. AI-powered assistive technology can enable people with impairments live more independent lives.
2. **Impact on Employment and Changes in the Workforce:** Automation powered by AI has the power to change whole industries and employment sectors, potentially eliminating jobs in certain fields while opening up new ones, especially in fields like AI development, maintenance, and supervision.
3. **Collaboration in the Workplace:** AI systems may operate in tandem with people, automating repetitive jobs so that people can concentrate on more intricate and creative elements of their jobs.

   Designed to operate with people in manufacturing and other areas, collaborative robots, or cobots,
4. **Ethical Factors:** The use of AI raises a number of ethical questions, such as algorithmic prejudice, privacy difficulties, and the possibility of using AI in ways that might be harmful to people or society.

   One of the main challenges is ensuring accountability, justice, and openness in AI systems.
5. **Human-AI Connection:** It is imperative to enhance the communication between people and AI. Interacting with AI systems is made simpler for humans via interfaces such as gesture recognition, natural language processing (NLP), and others.

   Artificial intelligence systems that make use of natural language interfaces include chatbots and virtual assistants.
6. **Learning and Skill Improvement:** The workforce needs continual education and skill development as a result of the integration of AI into several sectors.

   The capacity to adapt and collaborate with AI systems is becoming a must for people in the modern workforce.
7. **Innovation and creativity:** AI may help humans be more creative by giving them tools for idea generation, process optimization, and issue resolution. AI algorithms in music and art, for instance, can work in tandem with human artists to create original and one-of-a-kind pieces.
8. **Privacy and monitoring:** Individual privacy and civil liberties are under risk due to the growing use of AI in monitoring.

   It can be difficult to strike a balance between the security benefits of AI and the defense of individual rights.
9. **Artistic and Social Changes:** AI technologies have the potential to change social relationships, public discourse, and cultural standards. Responsible development and implementation of AI depend heavily on discussions about the moral application of the technology and how it affects society norms.

   In order to secure a fair and prosperous future, it is imperative that the ethical, social, and economic ramifications of AI's evolving relationship with humans be carefully considered. An essential component of this continuing interaction is striking a balance between the advantages of AI and ethical issues as well as human welfare.

6. Reliability of AI

The quality of the data utilized, the environment in which it is used, and the degree to which it serves its intended purpose are some of the aspects that affect an AI system's dependability. Because inadequate or biased datasets might result in erroneous AI models, data quality is extremely important. In delicate fields like healthcare and finance, trust and dependability are largely dependent on transparency and explainability.

AI systems ought to be resilient and able to deal with changes and unforeseen inputs. In addition, ethical problems such as prejudice, fairness, and privacy in AI algorithms and decision-making must be taken into account. Because people can offer context, evaluate data, and step in when AI systems falter or make mistakes, human oversight is frequently required. To guarantee that AI systems continue to be dependable over time, ongoing maintenance and monitoring are required. The way data is distributed, the environment, or user behavior changes may all affect how well AI models work. Security is also essential because it keeps AI models safe from hostile attacks and illegal access, which preserves their integrity. AI is reliable when it is applied correctly and when its

advantages and disadvantages are recognized.

The dependability of AI systems depends on legal and regulatory compliance since following rules and regulations reduce risks and guarantees ethical AI research and use. In addition, user comprehension and training are essential for the general dependability of AI systems. Even if AI systems are capable of amazing feats, human supervision and accountability are crucial elements of a trustworthy AI ecosystem.

7. Pros and Cons of AI

AI has the ability to completely transform daily life and the workplace with innovations like virtual assistants and self-driving automobiles. It also poses difficulties, painting a nuanced image of both utopia and dystopia. Figure 5 lists various risks and a variety of advantages.

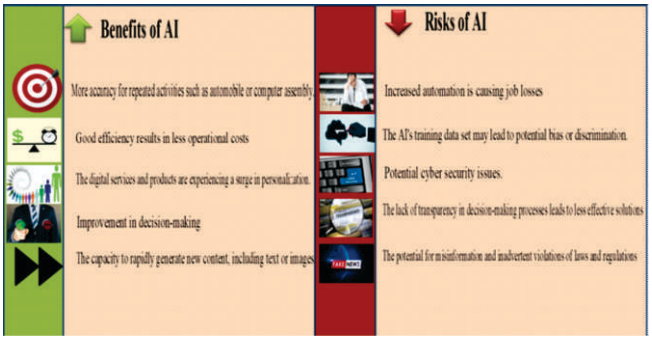

Fig: 5 Benefits and risks of AI

8. Future of AI

Moore's Law shows that artificial intelligence (AI) has significantly advanced computing technology. According to this rule, a microchip's transistor count doubles every two years as computer prices fall. Even though scientists predict Moore's Law to expire in the 2020s, deep learning and other contemporary AI approaches have been greatly affected by it. AI innovation has surpassed Moore's Law, according to recent study, and is about doubling every six months. This suggests that AI will undoubtedly have a big influence on a variety of industries, with much more impact anticipated in the ensuing decades.

9. Conclusion

Artificial Intelligence, a machine-like process, has numerous applications in e-commerce, robotics, healthcare, and automobiles. It is used for chat support, patient health examinations, and improving lifestyles. Artificial intelligence aims to make judgments similar to a human brain, making it popular in robotics, e-commerce, healthcare, and automotive industries. Chat assistance powered by AI is used to assess patients' health, and it is often used to enhance our quality of life.

10. References

- Coursera Staff (2023, Nov 29).What Is Artificial Intelligence? Definition, Uses, and Types. Coursera. https://www.coursera.org/articles/what-is-artificial-intelligence
- European society (2023, June 20). What is artificial intelligence and how is it used? News European https://www.europarl.europa.eu/news/en/headlines/society/20200827STO85804
- Geeksforgeeks.org (2023). Top applications of Artificial Intelligence (AI). Geeksforgeeks.org https://www.geeksforgeeks.org/artificial-intelligence-applications/
- Schroer, A. (2024, Jan 3) Artificial Intelligence. What Is Artificial Intelligence (AI)? How Does AI Work? https://builtin.com/artificial-intelligence.
- Shukla Shubhendu, S., & Vijay, J. (2013). Applicability of artificial intelligence in different fields of life. International Journal of Scientific Engineering and Research, 1(1), 28-35.
- Wang, H., Fu, T., Du, Y., Gao, W., Huang, K., Liu, Z., ... & Zitnik, M. (2023). Scientific discovery in the age of artificial intelligence. Nature, 620(7972), 47-60.

Important Dates

Paper Submission (Full length)	**30th May 2024**
Regular Registration	**30th May 2024**
Abstract submission	**30th May 2024**
Abstract /Paper Acceptance (Full length)	**08th June 2024**

Registration Form

The Registration fee can be paid by online with duly filled registration form by 30th May, 2024. **Scan Me**

https://forms.gle/Foad6bygRGrqC6iY8

Registration fees can be paid via scanning QR code

CONTACT DETAILS

Dr. P. Singh 8058654597

Email: editor@ijirg.com;
ijirg.india@gmail.com;

Visit for details: **https://ijirg.com/**
Facebook: **https://www.facebook.com/ijirg**
YouTube: **https://www.youtube.com/ @ijirg**
Linkedin: **https://www.linkedin.com/in/ijirg/**
X (Twitter): **https://twitter.com/ijirg_i**

CATEGORY	Before (14th May 2024)	After (14th May 2024)	International Participants	Paper Publication (After Acceptance)
Students	Rs.200	Rs.300	55$	2000 INR (Indian Delegates)
Research Scholars	Rs.300	Rs.400	80$	
Faculty/Scientist	Rs. 450	Rs.550	110$	100 $ (International Delegates)
Industry Personnel	Rs.550	Rs. 650	150$	

AWARDS

- *Emerging Academician of the Year 2024*
- *Young Researcher Award IJIRG - 2024*
- *Best Oral Presentation*
- *Best Poster Presentation*

Note: The presentation sessions would be conducted in virtual mode on GOOGLE PLATFORM.

CHIEF PATRON
Prof. P. L. Verma
Prof. A. K. Shrivastava
PATRON
Prof. Vishwa Nath Maurya
Prof. Arun Kumar Gautam
CONFERENCE CHAIR
Dr. P. Singh
CONVENER
Dr. Naveen Kumar Singh, IJIRG India
Dr. Naveen Kumar Ojha, Saarland University, Germany
CO-CONVENER
Prof. Hussian Ali Ahmed, Nawroz University, Iraq
Prof. Nitin P. Singh, JNU, Jaipur, India
Dr. Shiva Soni, IJIRG India
ORGANIZING SECRETARY
Dr. Vatsala Pawar, JNU Jaipur, India
Prof. Asghar Ali Ansari, Ex. Prof. Um-Al Qura University, S. A.
CO-ORGANIZING SECRETARY
Dr. S. Bhadoriya, Govt. P.G. College, Gwalior, M.P., India
Mr. Kapil Pal, JNU Jaipur, India
TECHNICAL LIAISON
Er. Vishnu Diwakar
Mr. Ashish Kumar Meena
ORGANIZING COMMITTEE
Prof. Chin Oi Hoong, Malaysia
Prof. Sandeep Kumar Tiwari, India
Prof. Anshuman Shrivastava, India
Dr. Anjali Chaudhary, Saudi Arabia
Dr. Md. Noor Alam, Bahrain
Dr. Md. Faisal Mallick, Saudi Arabia
Dr. Rajendra Kopil Kunwar, Ethiopia
Dr. Ekta Rana, Thailand
Dr. Pankaj Kumar Goswami, India
Dr. Pankaj Srivastava, India
Dr. Farida Khatoon, India
Dr. Devendra Kumar Gora, India
Dr. Pushpraj Singh, India
Mr. Amit Kumar Rahi, India
ADVISORY BOARD
Prof. Aime Lay-Ekuakille, Italy
Prof. Enkeleda Lulaj, Kosovo
Prof. Nada Ratkovic, Croatia
Prof. Gina Alcoriza, Philippines
Prof. Rajendra Addikari, Nepal
Prof. Kishan Sharma, India
Prof. Shobha Lal, India
Dr. Andi Asrifan, Indonesia
Dr. Murat Ates, Turkey
Dr. Idrees Ali Hasan, Iraq
Dr. Sanan Shero Malo, Iraq
Dr. Lazgin Kedher Barany, Iraq
Dr. Ansam Ali Ismaeel, Iraq
Dr. Priyanka Ghosh, IIT, India
Dr. A.V. Ravishankar Sarma, IIT, India
Dr. Rajesh Singh, India
Dr. S. K. Pandey, India
Dr. Rekha Israni, India
Dr. Puspraj Singh, India
Dr. Nand Kumar Patel, India
Mr. Anuj Kumar Shah, India
Dr. Manju lata Shrungi

3rd Global Conference
On
EMERGING TRENDS IN RESEARCH & DEVELOPMENT

ETRD – 2024

June 15 – 16, 2024

***Organized by IJIRG in* Virtual Mode**

In Association
IQAC Cell, Govt. Vivekanand P.G. College, Maihar, Satna, M.P. India
&
K. P. S. Science Academy, M. P. India
&
Kahaar Magazine, Lucknow, U. P., India

Supported by
Ferrenzo India Pvt. Ltd. Indore, M.P. India
&
Pointer Publishers, Jaipur, Rajasthan, India

Concept Note for the Conference

We are thrilled to announce the upcoming Global Conference on Emerging Trends in Research & Development, a prestigious gathering poised to ignite discussions, collaborations, and breakthroughs in the ever-evolving landscape of academia and innovation. Set to convene leading scholars, researchers, industry experts, and practitioners from around the world, this conference promises to be a nexus of intellectual exchange and exploration. With a focus on emerging trends shaping various fields of research and development, participants will have the opportunity to engage in insightful discussions, present cutting-edge findings, and forge meaningful connections across disciplines. From keynote presentations by eminent thought leaders to interactive panel sessions and poster presentations, the conference offers a dynamic platform to showcase the latest advancements, share diverse perspectives, and chart the course for future endeavours. Whether you are a seasoned academic, a budding researcher, or an industry professional, join us for an enriching experience at the Global Conference on Emerging Trends in Research & Development, where innovation knows no bounds and possibilities abound.

About the Journal

The International Journal of Innovative Research & Growth (IJIRG) is a distinguished scholarly publication dedicated to fostering intellectual advancement and facilitating interdisciplinary dialogue. As a double-blind peer-reviewed journal, IJIRG maintains a rigorous and impartial evaluation process, ensuring the highest standards of academic integrity. Embracing a multidisciplinary approach, the journal serves as a dynamic platform for the dissemination of groundbreaking research and innovative ideas across diverse fields. With its indexing in prestigious databases such as CrossRef, Index Copernicus International, RPRI, SJIF, Research Gate, J-Gate, Road, WorldCat, and more, IJIRG amplifies the visibility and impact of published work, reaching a global audience of researchers, practitioners, and scholars. Committed to promoting excellence in scholarship and contributing to the advancement of knowledge, IJIRG continues to be a leading resource for cutting-edge research and intellectual growth in academia.

Thrust Areas

We understand that research is constantly evolving, and we welcome participants to explore new and innovative topics that align with the overall goals and objectives of the conference. While we have identified certain thrust areas of research, we encourage participants to think outside the box and submit proposals for topics that may not fit within these areas but align with the overall theme of the conference.

- ✓ Artificial Intelligence and Machine Learning
- ✓ Biotechnology and Bioinformatics
- ✓ Climate Change and Environmental Sustainability
- ✓ Cybersecurity and Privacy
- ✓ Data Science and Analytics
- ✓ Energy Systems and Renewable Resources
- ✓ Interdisciplinary Research Methods and Approaches
- ✓ Internet of Things (IoT) and Sensor Networks
- ✓ Materials Science and Engineering
- ✓ Social Sciences and Humanities
- ✓ Sustainable Development and Urban Planning
- ✓ Technology Innovation and Entrepreneurship.
- ✓ Telecommunications and Networking Technologies
- ✓ Quantum Computing and Quantum Technologies
- ✓ Space Science and Aerospace Technologies
- ✓ Biophysics and Biomaterials
- ✓ Mathematical and Computational Sciences
- ✓ Agricultural Science and Food Technology
- ✓ Advanced Materials and Nanotechnology
- ✓ Biomedical Engineering and Healthcare Technologies
- ✓ Library and Information Science
- ✓ Business, Management and Accounting
- ✓ Hospitality and Tourism Management
- ✓ Chemical Sciences

Guidelines for Abstract

The abstract of the empirical paper for related thrust areas are to be uploaded along with registration form or can be mailed at ijirg.india@gmail.com or editor@ijirg.com by 30th May 2024. The abstract should be typed in single space using MS Word (about 250 words) and should include background, objectives, methods, results conclusion & references. The Title should be CAPITAL and BOLD followed by author's name, affiliation and Email id of corresponding author. The name of presenting author should be underlined.

Guidelines for full length Manuscript

The conference invites online full-length original research contributions from professionals from academic institutions, government undertakings, research scholars, and the student community from all around the globe. The conference will feature invited papers that cover key issues and also include oral presentations.

The conference seeks full-length papers, with a word limit of 6000 words that cover a wide range of topics within the thematic areas of the conference. The manuscripts should include a Title, Affiliation, Abstract, Introduction, Materials and Methods, Result and Discussion with Acknowledgement, Conflict of Interest and Funding Sources. The abstract/full paper should be typed in MS Word Times New Roman, 12 fonts with 1 line spacing. Figures and tables should be cited in the text and have concise and self-explanatory legends.

The conference will feature a double-blind peer-review process, and all submitted manuscripts will be checked for plagiarism (Turnitin/ iThenticate). The selected papers will be published in proceedings of IJIRG and/or in form of book with ISBN number.

The conference organizers invite interested individuals to submit their abstracts and full-length papers to the Organizing Secretary via E-mail:- ijirg.india@gmail.com; editor@ijirg.com. ETRD-24 conference is an excellent opportunity for researchers, academicians and practitioners to share their ideas, findings and knowledge within the thematic areas. The conference welcomes contributions from a diverse group of individuals and encourages submissions that promote research, innovation and growth.

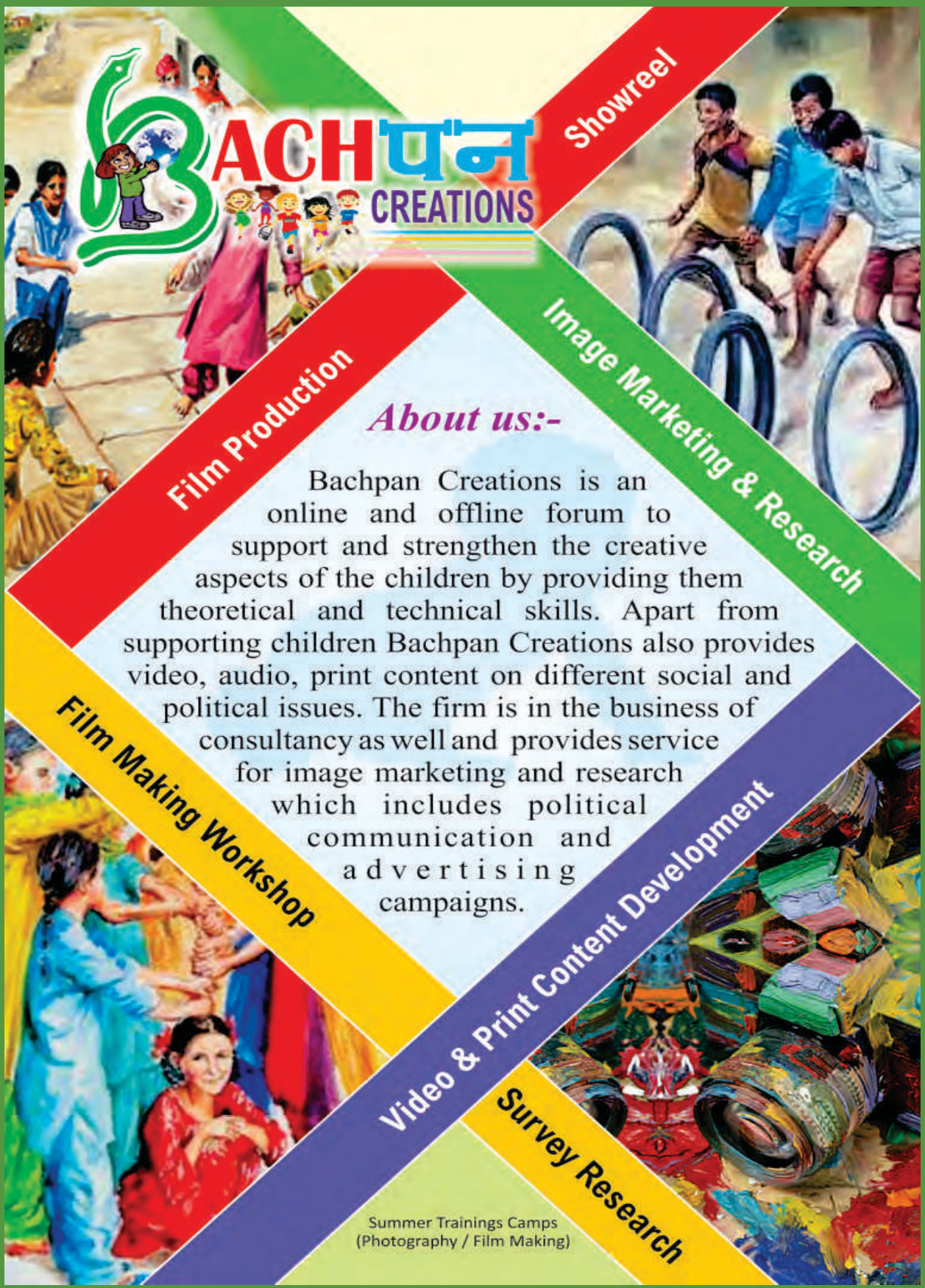

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

हेड आफिस: ई–998, रत्नाकर खण्ड, शारदा नगर, रायबरेली रोड, लखनऊ

E-mail: bachpanexpress@gmail.com, www.bachpanexpress.com, Mob.: 9198255566, 9580803904